Con. 3. VII. 30. 48
350

अंक 7
संख्या 30

शुक्रवार,
31 दिसम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

विधान का मसौदा-(जारी)..... 2009-2067
[अनुच्छेद 62 तथा 62-ए पर विचार]

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 31 दिसम्बर, सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में 10 बजे माननीय उपाध्यक्ष महोदय (डॉक्टर एच.सी. मुकर्जी) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

विधान का मसौदा–(जारी)

अनुच्छेद 62–(जारी)

***उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुकर्जी):** अब हम अनुच्छेद 62 पर आगे विचार जारी करेंगे।

(संशोधन संख्या 1310 और 1311 पेश नहीं किये गये।)

संख्या 1312 और 1329 समान आशय के हैं। संख्या 1329 पेश किया जा सकता है। डॉक्टर अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड 5 के बाद, निम्न नया खंड रख दिया जाये:–

'(5-a) In the choice of his Ministers and the exercise of his other functions under this Constitution, the President shall be generally guided by the instructions set out in Schedule III-A but the validity of anything done by the President shall not be called in question on the ground that it was done otherwise than in accordance with such instructions.' "

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

[(5-क) अपने मंत्रियों के चुनने में तथा इस संविधान के अधीन अपने अन्य कृत्यों के प्रयोग में प्रधान साधारणतया अनुसूची 3-क में दी हुई हिदायतों के अनुसार चलेगा, किन्तु प्रधान द्वारा की हुई किसी बात की मान्यता पर इसलिए आपत्ति न की जायेगी कि वह बात इन हिदायतों से अन्यथा की गई है।]

***उपाध्यक्ष:** इस संशोधन पर एक संशोधन है, वह है सूची 5 का संख्या 50 जो मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के नाम में है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन द्वारा 1329 में, प्रस्तावित नये खंड 5(क) में 'किन्तु प्रधान द्वारा' इससे आरंभ करके अंत तक के समस्त शब्द हटा दिये जायें।"

श्रीमान्, माननीय सदस्य डॉक्टर अम्बेडकर ने अभी-अभी जो संशोधन पेश किया है उससे अनुच्छेद 62 में एक नया खंड 5(क) जोड़ दिया जायेगा। इसमें यह प्रावधान है कि प्रधान अपने मंत्रियों को चुनने में तथा संविधान के अधीन 'अन्य प्रकार्यों की पूर्ति में' साधारणतया हिदायतों के अनुसार चलेगा। इस खंड के इस विभाग के संबंध में मेरा कोई झगड़ा नहीं है। किन्तु अंतिम कुछ पंक्तियां जिन्हें मैं हटाना चाहता हूं अत्यंत आपत्तिजनक प्रतीत होती हैं। कम से कम उनका स्पष्टीकरण आवश्यक है। मैं निम्न शब्दों को हटाना चाहता हूं "किन्तु प्रधान द्वारा की हुई किसी बात की मान्यता पर इसलिए आपत्ति न की जायेगी कि वह बात इन हिदायतों से अन्यथा की गई है"।

मेरा निवेदन है, श्रीमान्, कि इन शब्दों से विधान पर गंभीर अतिक्रमण होगा। इस खंड के प्रथम भाग का प्रभाव संविधान के अधीन 'अन्य प्रकार्यों' पर भी पड़ता है। यह शब्द सर्व आशय पूर्ण है। वास्तव में विधान के अधीन 'अन्य प्रकार्यों' का अर्थ समस्त प्रकार के प्रकार्यों से है। मंत्रियों को चुनने का काम तो ऐसा है जिस पर जरा भी उंगली नहीं उठाने देना चाहिये। किन्तु मेरा निवेदन है कि अन्य किसी प्रकार्य की मान्यता आपत्ति से परे नहीं होनी चाहिये। वास्तव में

विधान के अधीन प्रधान भी वैधानिक प्रधान होगा। वह मंत्रियों की मन्त्रणा पर कार्य करेगा। अत: विधान के अधीन अन्य प्रकार्यों के करने में, वह अपने मंत्रियों की मंत्रणा के अनुसार चलेगा। मैं जो शब्द हटा देना चाहता हूं उनका प्रभाव यह होगा कि इनसे प्रधान को विधान के अधीन अपने अन्य प्रकार्यों की पूर्ति में पूर्ण तथा निरंकुश शक्ति होगी। यह बात मानना तो हद से बाहर है। प्रधान के वैधानिक प्रधान बनने का वास्तविक प्रभाव यह होगा कि मंत्रिमंडल अथवा कोई मंत्री प्रधान को ऐसा कोई कार्य करने की मंत्रणा दे सकता है जो कि अवैधानिक है, और मैं जिन शब्दों को हटाना चाहता हूं उनको रखने का परिणाम यह होगा कि एक स्पष्टत: अवैधानिक कार्य, अथवा ऐसे कार्य पर जिससे कि विधान का जानबूझ कर खुलेआम उल्लंघन होता हो, आपत्ति नहीं की जा सकती। नये खंड में उल्लिखित है कि प्रधान के ऐसे कार्य पर 'आपत्ति न की जायेगी'। ऐसा करने से तो आपत्ति करने पर निषेध लगाती है। इस पर कहीं भी और किसी प्रकार भी कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। इस पर न्यायालय में, विधान मंडल में अथवा कहीं अन्यत्र कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। मैं नहीं जानता कि प्रधान के किसी कार्य की वैधता अथवा औचित्य पर किसी समाचार-पत्र में आपत्ति करना भी वर्जित होगा या नहीं। किन्तु, इन शब्दों का स्पष्ट अर्थ यह होगा कि विधान-मंडल अथवा न्यायालय में इस पर वाद-विवाद नहीं हो सकता, जहां कि अवैधानिक कार्य के विरुद्ध प्रभावी रूप में आपत्ति नहीं की जा सकती है। मैं निवेदन करता हूं, श्रीमान्, कि यह शब्द इतने व्यापक हैं कि इन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता। मैं ऐसा नहीं कहता और न ऐसा विश्वास ही करता हूं कि वे इसलिये रखे गये हैं कि किसी जानबूझ कर किये हुए अवैध कार्य को ढका जा सके तथा उसकी रक्षा की जा सके। मुझे ऐसा विश्वास नहीं है। किन्तु इन शब्दों का प्रभाव तो यही होगा। इससे मंत्री अथवा मंत्रिमंडल द्वारा प्रधान के नाम पर किये गये कार्यों पर आपत्ति होने से रक्षा तथा बचाव किया जा सकेगा, और इससे मंत्री को ऐसा रक्षण प्राप्त हो जायेगा जो कि उसे नहीं मिलना चाहिये। मंत्री अपने अवैधानिक कार्य का समर्थन करने के लिये प्रधान को प्रभावी ढाल के रूप में प्रयोग कर सकेगा। इस प्रकार विधान की पवित्रता को भारी धक्का पहुंचेगा। इसकी शक्ति का गंभीर ह्रास हो जायेगा, यदि इस खंड के उत्तर भाग के अधीन

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

एक सर्वथा अवैधानिक कार्य पर किसी प्रकार के वाद-विवाद अथवा आपत्ति करने का वर्जन हो जायेगा। मेरा निवेदन है, श्रीमान्, कि यह नागरिकों के अधिकारों का, जिनको विधान में इतने शोर के साथ स्पष्टतः प्रत्याभूत किया गया है, अत्यंत गंभीर अतिक्रमण है। यदि प्रधान को मंत्रियों की मंत्रणा पर अवैधानिक तरीके से बाध्य अथवा तैयार किया जा सके, तो यह अधिकार पूर्णतः व्यर्थ हो जायेंगे। मेरा निवेदन है कि यह प्रभाव ऐसा है जो कि अवांछनीय है और शायद इच्छित नहीं है। अतः मैं चाहता हूं कि प्रधान के किसी कार्य की अवैधानिकता के विषय में आपत्ति को रोकने की संभावना ही न रहे। कम से कम मैं स्पष्टीकरण चाहता हूं। मैं समझता हूं कि अंतिम कुछ पंक्तियों में इस प्रकार के अतिक्रमण से नागरिकों के अधिकारों का रक्षण होना चाहिये।

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 1312 । मि. मोहम्मद ताहिर और सैयद जाफ़र इमाम क्या आप चाहते हैं कि इस संशोधन पर मत लिये जायें?

***सैयद जाफ़र इमामः** (बिहार : मुस्लिम): हां।

(संशोधन संख्या 1313 पेश नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 1314, 1315, 1316, 1317, 1319 और 1320 सब सदृश आशय के हैं। संख्या 1315 सर्वाधिक व्यापक दिखाई देता है तथा वह पेश किया जा सकता है। वह श्री दामोदर स्वरूप सेठ के नाम में है।

(संशोधन संख्या 1315 पेश नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 1314, जोकि श्री केशव राव के नाम में है, पेश किया जा सकता है।

(संशोधन संख्या 1314 पेश नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 1316, जोकि मि. मोहम्मद इस्माइल तथा मि. पोकर साहिब के नाम में है, पेश किया जा सकता है।

बी. पोकर साहिब बहादुर (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्न शब्द रख दिये जायें:

'(2) मंत्रिगण तभी तक पदासीन रहेंगे जब तक कि वे लोक-सभा के विश्वास के पात्र रहें।'"

श्रीमान, मैं आरंभ में ही बता सकता हूं कि यह संशोधन सांप्रदायिक नहीं है और न इसके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य ही छिपा हुआ है। मुझे यह बात अपने पिछले अनुभव के कारण कहनी पड़ रही है। इस संशोधन में यही बात कही गई है जो कि कुछ परिपाटी प्रचालित है उसे विधान में लिखित रूप से रख दिया जाये। नि:संदेह यह परिपाटी है कि मंत्री उसी समय तक पदासीन रहेंगे जब तक कि वे लोक सभा के विश्वासपात्र होंगे। जब तक वे लोक सभा के विश्वासपात्र रहेंगे, नि:संदेह वे प्रधान द्वारा पदच्युत नहीं किये जायेंगे। किन्तु व्यवहार रूप में, यह कहना सत्य नहीं है कि मंत्रिगण प्रधान के प्रसाद काल तक पदासीन रहेंगे। यह कथन तो वास्तव में नाट्यमात्र ही है कि मंत्रिगण प्रधान के प्रसाद काल में ही पदासीन रहेंगे। वास्तव में, ऐसा नहीं है नि:संदेह यह परिपाटी ग्रेट ब्रिटेन तथा कुछ अन्य देशों में प्रचलित है। किन्तु जब हम देश के लिए लिखित विधान की व्यवस्था कर रहे हैं, तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि हम उन परिपाटियों से चिपटे रहें जो कि अन्य देशों में पाई जाती हैं। जब हमें विधान में प्रत्येक बात को स्पष्टत: रखने का अवसर मिला है, तब भी क्या हम यूनाइटेड किंगडम अथवा अमरीका के उदाहरण पेश करने के लिये ही उन्हें छोड़ दें? विधान में, कागज़ पर वास्तविक परिस्थिति लिख देने में कुछ भी हानि नहीं है, कि मंत्रिगण तब तक पदासीन रहेंगे जब तक कि वे लोगों के विश्वासपात्र बने रहेंगे। मैं यह बात इसलिये कह रहा हूं कि इस संशोधन पर केवल एक ही संभावित आपत्ति है कि यह तो ऐसी परिपाटी है जो कि संसार के समस्त भागों में लागू है, अत: इसे विधान में रखना अनावश्यक है। वास्तव में, मैं अनुभव करता हूं कि यहां

[बी. पोकर साहिब बहादुर]

जो कार्य-प्रणाली है उसके कारण में घाटे की स्थिति में हूं; इस कार्य-प्रणाली के अंतर्गत जब तक डॉक्टर अम्बेडकर खड़े होकर आपत्ति नहीं करते तब तक किसी को यह पता नहीं लग सकता कि उसके संशोधन पर क्या आपत्ति है। प्रत्येक विषय पर वे ही अंत में बोलते हैं। प्रस्तावक अथवा परिषद् के किसी अन्य सदस्य को उन आपत्तियों के उत्तर देने का अथवा परिषद् को यह बताने का अवसर नहीं मिलता कि वे आपत्तियां ठीक हैं अथवा नहीं। मैं कार्य-प्रणाली पर ज़रा भी आपत्ति नहीं कर रहा हूं। मैं तो केवल यही बता रहा हूं कि यहां की कार्य-प्रणाली क्या है। अत: मुझे पूर्व-कल्पना करने की आवश्यकता पड़ती है कि किस प्रकार के सीधे-सादे संशोधन पर संभवत: क्या आपत्ति हो सकती है।

अनुच्छेद 61 पर वाद-विवाद के संबंध में माननीय श्री के. सन्तानम् ने जो कुछ कहा था उससे मुझे ख्याल हुआ है कि संभवत: केवल यही आपत्ति की जायेगी कि यही परिपाटी अन्यत्र प्रचलित है, अत: इसे पत्र पर लिखना कठिन होगा और यह अनावश्यक भी है। इस पूर्व कल्पित आपत्ति पर मेरा निवेदन है कि अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात् भी हमें आगे दासवत् नहीं होना चाहिये। नि:संदेह अब तक हम दासवत् ग्रेट ब्रिटेन तथा ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के अन्य भागों की परिपाटी अथवा कार्य-प्रणाली का अनुसरण करते रहे हैं। किन्तु अब हमें अपने देश के लिये हम जो उचित समझें वही करने की स्वतंत्रता है। फिर हम अपने विचारों को विधान में ही क्यों न रखें? मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि आगे भी हम अन्यत्र प्रचलित परिपाटियों और उदाहरणों से क्यों चिपटे रहें और हम जो कानून बनाना चाहते हैं वही अपने विधान में क्यों न रखें? यह परिपाटियां अन्य देशों में इसलिये प्रचलित हैं कि वहां अलिखित विधान हैं। कम से कम जहां तक इन पहलुओं का संबंध है, हम उन्हें अस्पष्ट रूप में क्यों छोड़ें, जिससे कि सर्वोच्च न्यायालय में जाकर संघर्ष हो? जब हमें इन चीजों को अब विधान में रखने का अवसर मिला हुआ है तो इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। हम इसे स्पष्ट क्यों नहीं कह सकते? ऐसा करने में क्या हानि अथवा जोखिम है, मैं समझ नहीं पाता।

श्रीमान्, जैसा कि मैं कह चुका हूं मैंने अपने संशोधन पर संभाव्य आपत्ति की कल्पना कर ली है और मैं कहता हूं कि यह तो कोई आपत्ति ही नहीं है। हमें

तो बल्कि स्पष्टत: लिपिबद्ध कर देना चाहिये कि क्या परिपाटी है।

अब, श्रीमान्, माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन के बाद के भाग को निकाल देने के संबंध में, मेरे माननीय मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद का जो संशोधन है मैं उसका हार्दिक समर्थन करता हूं। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन में इन शब्दों के निकाल देने का सुझाव है कि "किन्तु प्रधान द्वारा की हुई किसी बात की मान्यता पर इसलिये आपत्ति नहीं की जायेगी कि वह बात इन हिदायतों से अन्यथा की गई है।" मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन में केवल उस चीज को हटाने का प्रयत्न किया गया है जिसके अनुसार माननीय डॉक्टर अम्बेडकर के संशोधन के प्रथम भाग में दी हुई वस्तु को द्वितीय भाग में छीन लेने का प्रयत्न किया गया है। यदि डॉक्टर अम्बेडकर के संशोधन का दूसरा भाग नहीं हो तो इसका कुछ आशय हो सकता है। अन्यथा यह संशोधन केवल कागजी संशोधन होगा, एक सदाशय मात्र होगा, जिसमें कोई तथ्य नहीं होगा और जिससे किसी की सहायता न होगी। अत: मैं मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन का हार्दिक समर्थन करता हूं।

अब, श्रीमान्, जहां तक मेरे संशोधन का संबंध है, अपना स्थान लेने से पूर्व मैं केवल इतना ही कहूंगा : कि जैसे कि मैं पहले ही कह चुका हूं, मुझे इस संशोधन पर संभावित आपत्तियों तथा उनके उत्तर की कल्पना करनी पड़ी। दूसरी संभव आपत्ति, जिसकी मैं अन्य खंडों के वाद-विवाद संबंधी अपने अनुभव के अनुसार कल्पना कर सकता हूं, वह यह है कि संशोधन सांप्रदायिक है। उस पर मेरा कहना है यह संशोधन पूर्णत: असांप्रदायिक तथा अराजनीतिक है और इसके पीछे कोई उद्देश्य निहित नहीं है। यह तो समस्या के केवल वैधानिक पहलू पर ही प्रभाव डालता है। केवल यह बात है कि यह ऐसे सदस्य द्वारा पेश किया जा रहा है जो कि मुस्लिम है। मैं यह इसलिये कह रहा हूं, श्रीमान्, कि कल मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि डॉक्टर अम्बेडकर ने मि. के.टी.एम. अहमद शाह के एक संशोधन पर बोलते हुए परिषद् से कहा था कि यह स्मरण रखना चाहिये कि यह संशोधन केवल मुस्लिमों द्वारा ही पेश किये जाते हैं तथा वे ही उनका समर्थन करते हैं। मैं पूछता हूं, श्रीमान्, क्या कोई संशोधन अथवा उसके

[बी. पोकर साहिब बहादुर]

पीछे युक्ति केवल इसीलिये बलहीन हो जाती है कि प्रस्तावक एक मुसलमान है अथवा ईसाई अथवा अनुसूचित जाति का अथवा अन्य किसी अल्पसंख्यक जाति का सदस्य है? मुझे यह देख कर बहुत खेद है कि एक ओर तो डॉक्टर अम्बेडकर ने इस विधान को शीघ्र पास कराने का अत्यन्त कठिन कार्य, इतना त्याग करके, अपने ऊपर ले लिया है वह देश की महान् सेवा है, पर मुझे ज़रा भी आशा नहीं थी कि वे ऐसे तर्कों की शरण लेंगे।

***उपाध्यक्ष:** कृपया अपने संशोधन तक ही सीमित रहिये। आप अपने मार्ग से बाहर जा रहे हैं।

***बी. पोकर साहिब बहादुर:** श्रीमान् मैं नहीं चाहता.....।

***उपाध्यक्ष:** कृपया मेरे सुझाव पर अमल करिये।

***बी. पोकर साहिब बहादुर:** मैं आपके सुझाव पर अमल कर रहा हूं। मैं यही कहना चाहता हूं, मैं केवल परिषद् से अनुरोध कर रहा हूं कि इस संशोधन के औचित्य अथवा मान्यता पर विचार करते समय, इस बात का ख्याल नहीं करना चाहिये कि इसका प्रस्तावक एक मुस्लिम है। श्रीमान्, मैं यह कहने का अधिकारी हूं कि अन्य मुस्लिम सदस्यों द्वारा प्रस्तावित संशोधनों के संबंध में जो कुछ हुआ है उसे ध्यान में रखते हुए.....।

***उपाध्यक्ष:** आपको इस पर अधिक बोलने की आवश्यकता नहीं है।

***बी. पोकर साहिब बहादुर:** यह ठीक है, श्रीमान्, मैं पूर्णत: सहमत हूं। मैं केवल उस बात को स्पष्ट करना चाहता था। बस। मैं केवल यही कहना चाहता था कि यदि अल्पसंख्यक जातियों के संशोधनों का विरोध करने के लिये इस तरह के तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं तो परिषद् में वाद-विवाद का स्तर नीचा हो जायेगा हमें इस स्तर को और उच्च रखने का प्रयत्न करना चाहिये।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहब** (मद्रास : मुस्लिम): मैं एक बात जानना चाहता हूं, श्रीमान्, क्या मैं जान सकता हूं कि क्योंकि संशोधनों के प्रस्तावकों को

उत्तर देने का अधिकार नहीं होता और विशेषत: क्योंकि कुछ सदस्यों ने कुछ गंभीर बातें कही हैं और सदस्यों पर वैयक्तिक व्यंग भी किये हैं, अत: क्या वे उत्तर देने का अवसर आने पर उनका उत्तर दे सकते हैं, विशेषतया जब कि उन्हें व्यंगों का और परिषद् में किये गये अनुचित और असंगत कथनों का उत्तर देने का अवसर प्राप्त हो? समस्त संसदीय वाद-विवादों में किसी गंभीर संशोधन, किसी आशयपूर्ण संशोधन के प्रस्तावक को अंत में उत्तर देने का अधिकार है; किन्तु आपने, श्रीमान्, विपरीत नियम बना दिये जिनको हम शिरोधार्य करते हैं। किन्तु क्या हमें, अवसर मिलने पर और वह भी ऐसा अवसर मिलने पर जब कि सदस्य को अपने रास्ते से हटना न पड़े, उन कथनों का उत्तर देने का अधिकार नहीं है?

***उपाध्यक्ष:** मैं निस्संदेह किसी सदस्य को अनुचित आक्षेपों का उत्तर देने से नहीं रोकूंगा। इस विषय में मुझे अपने मन में सर्वथा कोई संदेह नहीं है। साथ ही साथ मैं अपनी शक्तियों का प्रयोग करके सदस्यों को समझाऊंगा कि वे उत्तर देते समय ऐसी भाषा का प्रयोग करें जो आवेशजनक न हो। इसी भावना से मैंने पोकर साहिब से वह प्रार्थना की थी। मेरे विचार में आप सहमत होंगे कि बिना अनावश्यक संघर्ष के कार्य संपादन करने का यही उपाय है।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहब:** मैं आपके परामर्श को समझता हूं तथा उससे सहमत हूं, श्रीमान्, कि सदस्यों को कोई आवेशजनक भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिये। मुझे आशा है कि आपका यह परामर्श परिषद् के सब वर्गों के लिये है।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभापति ने कभी कोई ऐसी बात कहने का अपराध किया है जो परिषद् के एक ही वर्ग के लिये हो? मेरे विचार में ऐसा कभी नहीं हुआ।

***श्री मोहम्मद इस्माइल साहब:** इसी पर मैं आप से बल दिलवाना चाहता था, श्रीमान्, मुझे यह बाधा इसलिये डालनी पड़ी थी कि कुछ आवेशजनक बातें कही गई थीं। वे सर्वथा अकारण थीं। अत: मैं आपके इस कथन के लिये कृतज्ञ हूं कि आपका परामर्श परिषद् के केवल एक ही वर्ग के लिये नहीं है, प्रत्युत सब वर्गों के लिये है। बाधा करने के लिये मैं आपसे क्षमा-याचना करता हूं।

***उपाध्यक्षः** पोकर साहिब, कृपया अपनी वक्तृता जारी रखिये।

***बी. पोकर साहिब बहादुरः** श्रीमान्, मैं आपके परामर्श का सादर पालन करूंगा। मैं न आवेशजनक बातें ही कहना चाहता हूं और न इस विषय पर अधिक बोलना ही चाहता हूं। मैं जो कुछ कहना चाहता था, पहले ही कह चुका हूं कि कोई सदस्य किसी जाति विशेष का है यह बात ऐसा कहने का आधार नहीं बननी चाहिये कि कोई युक्ति विशेष का कुछ मूल्य नहीं है अथवा वह अमान्य है क्योंकि किसी जाति विशेष के सदस्य ने कही है। मैं यह बात विशेषतः इस कारण कहता हूं कि परिषद् के प्रत्येक सदस्य का यह कर्त्तव्य है कि वाद-विवाद को उच्च स्तर पर रखे। हमें उस निम्न स्तर पर नहीं जाना चाहिये, जहां कि हम ऐसे कथनों से पहुंच जायेंगे। मैं इस विषय पर और अधिक नहीं कहना चाहता। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को पेश करता हूं और यह बात परिषद् पर छोड़ देता हूं कि वह इस प्रश्न का प्रसंग न लेते हुए कि यह मुस्लिम द्वारा पेश किया गया है इस पर विचार करे।

(संशोधन संख्या 1317 पेश नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 1319, प्रोफेसर शाह, क्या आप चाहते हैं कि इस पर मत लिये जायें?

प्रोफेसर के.टी. शाह (बिहार : जनरल): हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन पर एक संशोधन है। मैं उसे पेश करने की अनुमति देता हूं। सूची 5 का संख्या 48 ।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं चाहता हूं कि इस पर भी मत लिये जायें।

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 1320 जो मि. ताहिर और मि. जाफ़र इमाम के नामों से है। क्या आप चाहते हैं, कि इस पर मत लिये जायें।

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** इस पर एक संशोधन है। सूची 5 का संख्या 49 ।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं चाहता हूं कि इस पर भी मत लिये जाने चाहियें।

(संशोधन संख्या 1318 और 1321 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1322 जो श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय के नाम पर है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान्। यह अच्छा संशोधन है किन्तु यह कोरा शाब्दिक है।

***उपाध्यक्ष:** यह अच्छा संशोधन है चाहे यह शाब्दिक है। अत: इसे पेश करने की अनुमति दी जाती है।

***श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (3) में, 'Council' शब्द के पश्चात् 'of Ministers' ये शब्द रख दिये जायें।"

स्पष्ट है कि यह साधारण संशोधन है किन्तु मैं इसे अत्यंत आवश्यक समझता हूं। Council शब्द का विधान के मसौदे में भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न आशय व्यक्त करने के लिये प्रयोग किया गया है। यह वांछनीय है कि इस खंड में कुछ भी अस्पष्ट अथवा संदेहास्पद नहीं छोड़ना चाहिये। यह ठीक-ठीक और निश्चित होना चाहिये। मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर और इस परिषद् को इसके स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

(संशोधन संख्या 1323 और 1324 पेश नहीं किये गये।)

***श्री मोहम्मद ताहिर:** श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:

'(5) A Minister shall at the time of his appointment as such, be a member of the Parliament.'

[(5) कोई मंत्री अपने पद पर नियुक्त होने के समय संसद् का सदस्य होगा।]

[श्री मोहम्मद ताहिर]

अपने संशोधन के संबंध में कुछ शब्द निवेदन करने से पूर्व मैं परिषद् का ध्यान अनुच्छेद के विद्यमान खंड की ओर आकृष्ट करता हूं। खंड (5) में लिखा है:

"कोई मंत्री, जो छ: निरन्तर मासों की किसी अवधि तक संसद् के किसी आगार का सदस्य न रहे, उस अवधि के पश्चात् मंत्री न रहेगा।"

इससे पता चलता है कि यदि कोई व्यक्ति संसद् का सदस्य न भी हो तब भी वह मंत्री नियुक्त किया जा सकता है। इस संबंध में मेरा निवेदन है कि यह जनतन्त्र की भावना के सर्वथा विरुद्ध है कि ऐसे व्यक्ति को मंत्री बनाया जाये जिसे कि लोगों ने चुना नहीं है। जब संसद् का निर्माण होगा तब यह स्पष्ट है कि वह 300 से भी अधिक सदस्यों का आगार होगा और वे सब सदस्य देश के लोगों द्वारा निर्वाचित होंगे, और कोई कारण नहीं है कि बाहर के किसी व्यक्ति को जो कि संसद् का सदस्य न हो मंत्री नियुक्त किया जाये। यह कल्पना नहीं की जा सकती कि संसद् के 300-400 सदस्यों में से प्रधान अथवा दल के नेता को मंत्रिमंडल में लेने योग्य व्यक्ति नहीं मिल सकेगा और उसे ऐसा मंत्री चुनना पड़ेगा जो कि संसद् का सदस्य न हो। मेरे विचार में यह जनतंत्र की भावना के विरुद्ध है, वरन् यह तो जनतंत्र के मूल पर ही आघात है कि देश द्वारा निर्वाचित संसद् के सदस्यों में से मंत्री को न चुना जाये। अत: मेरा निवेदन है कि इस खंड के स्थान पर मेरा संशोधन रख देना चाहिये।

इसके बाद मेरे माननीय मित्र डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन, अर्थात् संख्या 1329 पर मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। इस विषय पर मैंने एक संशोधन संख्या 1312 की सूचना दी थी, जो इस प्रकार है।

" 'In choosing his Ministers the President shall be generally guided by the instructions set out in Schedule IV-A.'

[अपने मंत्रियों को चुनने में प्रधान साधारणतया अनुसूची 4 (क) में दी हुई हिदायतों के अनुसार चलेगा।]

अब मेरे मित्र ने ऐसा ही संशोधन रखा है, किन्तु वह बिल्कुल वैसा नहीं है, और उन्होंने अनुसूची 3 (क) को चुना है। मैं कहना चाहता हूं कि अनुसूची 3 (क) उचित स्थान नहीं है, क्योंकि विद्यमान अनुसूचियों में हम देखते हैं कि अनुसूची 4 में शासकों (गवर्नरों) के लिये हिदायतें हैं, और अनुसूची 3 में घोषणाओं के प्रपत्र हैं। अत: मेरा निवेदन है कि यदि इस अनुसूची को उचित स्थान में रखना है तो अनुसूची 4 अथवा 4 (क) ही उचित हो सकता है। इसे अनुसूची 3 (क) का स्थान नहीं दिया जा सकता। इसके अतिरिक्त, मेरे माननीय मित्र द्वारा प्रस्तावित संशोधन का जो अंतिम भाग है वह तो प्रधान को दिये गये निर्देशों का निराकरण ही है; उसमें लिखा है कि "किन्तु प्रधान द्वारा की हुई किसी बात की मान्यता पर इसीलिये आपत्ति न की जायेगी कि वह बात इन हिदायतों से अन्यथा की गई है।" इस अनुसूची के पीछे भावना यह है कि प्रधान को, मंत्री चुनने में अल्पसंख्यकों को उचित प्रतिनिधित्व देने का ख्याल रखना चाहिये। मेरे माननीय मित्र डॉक्टर अम्बेडकर ने जो आदेश रखा है उससे तो मुझे पता लगता है कि यदि संशोधन में उस भाग को रखा जायेगा तो अल्पसंख्यकों को उचित प्रतिनिधित्व देने का जो विचार है वह पूरा ही नहीं हो सकता। वास्तव में मेरे माननीय मित्र ने प्रधान को स्वविवेक की शक्ति देने में बहुत उदारता दिखाई है, जब कि कल अपनी वक्तृता में उन्होंने परिषद् को स्पष्ट कहा था कि प्रधान को कोई स्वविवेक की शक्ति नहीं दी जानी चाहिये, और परिषद् ने इसे स्वीकार कर लिया था। इस संशोधन द्वारा, दूसरे शब्दों में, उन्होंने प्रधान को स्वविवेक की शक्ति दे दी है। मेरा निवेदन यह है प्रधान को हिदायतें बहुत सीधी और स्पष्ट होनी चाहियें जैसे कि मैंने अपने संशोधन में रखी हैं और मुझे आशा है कि मेरे माननीय मित्र डॉक्टर अम्बेडकर इस पर विचार करेंगे और कृपया अपने संशोधन को तदनुसार संशोधित कर लेंगे, जिससे कि हिदायतों की सूची अत्यंत सीधी और स्पष्ट हो।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'छ: निरंतर मासों की किसी अवधि तक' इन शब्दों के स्थान पर 'अपनी नियुक्ति के पश्चात् छ: निरंतर मासों की किसी अवधि तक' ये शब्द रख दिये जायें।"

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

मैं समझता हूं खण्ड का यही अभिप्राय होगा। मेरे विचार में तो यह अभिप्राय नहीं हो सकता कि विदेश चले जाने अथवा ऐसा काम करने के कारण जिससे कि वह परिषद् का सदस्य न रह सके, वह निर्योग्य हो जाये अथवा मंत्रिपद पर न रहे। इस खंड का यही अभिप्राय होगा कि यदि कोई मंत्री, मंत्री नियुक्त होने के बाद निरंतर छः मास तक सदस्य न हो, वह पहले ही न चुना गया हो अथवा बाद में भी आगार का सदस्य चुना न जा सका हो, तो वह मंत्री नहीं रहना चाहिये। यह तो, श्रीमान्, मंत्री के सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का परिणाम ही है, जिसके अनुसार प्रत्येक मंत्री को संसद् के किसी न किसी आगार का सदस्य होना चाहिये। अतः मैं समझता हूं कि इस संशोधन के समर्थन में कोई लम्बी-चौड़ी युक्तियों को पेश करना अपेक्षित नहीं है। मैं इसे परिषद् में पेश करता हूं।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन पर एक संशोधन, सूची 5 का संख्या 71 है जो श्री कृष्णमाचारी के नाम से है। क्या वे इसे पेश कर रहे हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

> "कि संशोधन-सूची के संशोधन संख्या 1326 में 'के पश्चात्' इन शब्दों (जिन शब्दों के रखने का सुझाव उनमें) के स्थान पर 'कि तारीख से' ये शब्द रख दिये जायें।"

यदि यह संशोधन स्वीकार हो जाता है तो, यह इस प्रकार हो जायेगा:

'अपनी नियुक्ति की तारीख से, छः निरंतर मासों की अवधि तक' इत्यादि। यह बहुत छोटा-सा संशोधन है। इससे आशय बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है और पता लग जाता है कि छः मास कब आरंभ होंगे। मुझे भरोसा है कि परिषद् इसे स्वीकार कर लेगी।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): क्या मैं अपने मित्र श्री कृष्णमाचारी को सुझाव दूं कि उनके संशोधन के आशय और अर्थ के अनुकूल ही 'any' शब्द के स्थान पर 'a' शब्द रखा दिया जाना चाहिये। any शब्द से इस प्रसंग में कोई अर्थ नहीं निकलता।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** व्यक्तिगत रूप में मुझे कोई आपत्ति नहीं है, यद्यपि मेरे विचार से इससे कोई आशय में अंतर नहीं होगा।

(संशोधन संख्या 1327 पेश नहीं किया गया।)

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में 'संसद् के किसी आगार' इन शब्दों के स्थान पर 'लोक सभा' ये शब्द रख दिये जायें।"

इस संशोधन को मैंने अपने दूसरे संशोधन द्वारा संशोधित कर दिया है जो कि सूची 5 में सख्या 72 है। मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन-सूची के संशोधन संख्या 1328 के स्थान पर निम्न संशोधन रख दिया जाये:

'कि अनुच्छेद 62 के खंड 5 में 'सदस्य न रहे' इन शब्दों के स्थान पर "निर्वाचित सदस्य न रहे" ये शब्द रख दिये जायें'।"

यह एक आधारभूत संशोधन है। हमने विधान में व्यवस्था की है कि राज्य परिषद् में 12 सदस्य मनोनीत किये जायेंगे। परिषद् में 12 सदस्य नियुक्त किये जायेंगे और निम्न परिषद् में भी आंग्ल-भारतीय मनोनीत होंगे विद्यमान रूप में खंड (5) के अनुसार निर्वाचकों द्वारा न चुने हुए लोग भी सरकार के स्थायी मंत्री बन सकेंगे। यह जनतंत्र के तरीकों के सर्वथा विरुद्ध है। पहले मेरी इच्छा थी कि केवल निम्न सभा के सदस्य ही, जो कि सामान्य निर्वाचकों द्वारा चुने गये हों, मंत्री नियुक्त होने के योग्य होंगे, किन्तु कई सदस्यों की सम्मति जानने के पश्चात् मैंने सोचा कि मेरा संशोधन इतना उग्र नहीं होना चाहिये, किन्तु मेरे विचार में किसी व्यक्ति को मंत्री नियुक्त नहीं करना चाहिये जब तक कि उसमें निर्वाचकों का विश्वास न हो। अत: मैं चाहता हूं कि 'सदस्य न हो' के स्थान पर 'निर्वाचित

[प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना]

सदस्य न हो' ये शब्द होने चाहिये। आपको स्मरण होगा कि, पहले, प्रधान के निर्वाचन पर वाद-विवाद करते समय हमने व्यवस्था की थी कि केवल निर्वाचित सदस्यों को ही मत देने का अधिकार होना चाहिये। अब, यदि मनोनीत सदस्य प्रधान के निर्वाचन में मत देने के योग्य नहीं समझे जाते हैं, यदि हम उन्हें इतना भी उत्तरदायित्व नहीं सौंप सकते, तो निस्संदेह भारत सरकार का मंत्री होना तो इससे कहीं अधिक उत्तरदायित्व का पद है। यही अवस्था किसी प्रांत के मंत्रिमंडल के विषय में होगी। अतः, यदि मनोनीत सदस्य प्रधान के निर्वाचन में मत देने के योग्य नहीं हैं तो वे किसी सरकार के मंत्री होने के योग्य भी नहीं हैं। प्रत्येक मंत्री को, जो कि मंत्रिमंडल का सदस्य हो खुले चुनाव में आना चाहिये और यदि वह चुना जाये, तभी उसे मंत्री नियुक्त किया जाना चाहिये। अन्यथा तो यही होगा। कई प्रांतों में उच्च परिषदें होंगी और वहां मनोनीत सदस्य होंगे, और यदि ये मनोनीत सदस्य मंत्री हो सकते हों तो मुझे विश्वास है कि ऐसा भी अवसर आ सकता है जब सारी मंत्रिपरिषद् में शायद प्रधान मंत्री के अतिरिक्त शेष सब मनोनीत सदस्य ही होंगे। वास्तव में वह अत्यन्त असाधारण स्थिति होगी। वह तो जनतंत्र के सर्वथा प्रतिकूल होगा। अतः मैं चाहता हूं कि इस प्रश्न को उचित रूपेण समझा जाये। कदाचित् यही मेरे माननीय डॉक्टर अम्बेडकर का अभिप्राय था और उनका यही आशय था कि यदि कोई मंत्री छः मास के भीतर ही किसी न किसी आगार का सदस्य नहीं बनेगा तो वह मंत्री नहीं रहेगा। इससे उनका निस्संदेह यही आशय था कि वह चुना जाना चाहिये और यदि यही उनका आशय था तो मैं उनकी इस बात का अत्यंत स्वागत करूंगा, और मैं आशा करता हूं कि वे मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेंगे मुझे आशा है कि इस प्रकार से वे ऐसा आयोजन करेंगे कि सरकार पर ऐसा दोषारोपण न हो सके कि हमारे विधान में ऐसे मंत्रिमंडल बन सकते हैं जिनमें प्रधान मंत्री के अतिरिक्त सब मंत्री मनोनीत हों। विशेषतया राज्यों के विधान-मंडलों में, जैसे कि इस समय प्रावहित है, उच्च परिषदों में लगभग दो-तिहाई सदस्य मनोनीत होंगे, और यदि कोई प्रधान मंत्री केवल उन्हीं सदस्यों को नियुक्त करने की सोच ले, तो सारा मंत्रिमंडल एक प्रकार का मनोनीत मंत्रिमंडल हो जायेगा और वह निस्संदेह जनतंत्र के सिद्धान्तों के सर्वथा विरुद्ध है। इसी प्रकार केन्द्रीय संसद् में भी प्रधान जिन 12 सदस्यों को मनोनीत करे, वे ऐसे व्यक्ति हो सकते हैं जिनमें से अधिकांश मंत्रिमंडल में

नियुक्त हो जायें। हो सकता है ऐसी बात हो ही नहीं, किन्तु यह सर्वथा संभव है और हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि कोई प्रधान मंत्री अपनी शक्ति का दुरुपयोग न होने दे सके। अतः मेरे विचार में 'निर्वाचित सदस्य' इस शब्द के जोड़ देने से सब बातें नितांत स्पष्ट हो जायेंगी। मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर इस संविधान को स्वीकार कर लेंगे। श्रीमान् मैं इसे पेश करता हूं।

(संशोधन संख्या 1330 तथा 1331 पेश नहीं किये गये।)

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (6) के पश्चात्, निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:

'(7) Every Minister shall, before he enters upon the functions and responsibilities of his office, make a declaration and take steps in regard to any right, title, corresponding to those provided in this Constitution for the President and Vice-President, and shall take an oath—or make a solemn declaration—in the presence of the President and of his colleagues in the following form.' "

[(7) प्रत्येक मंत्री, अपने पद के प्रकार्यों तथा उत्तरदायित्वों को ग्रहण करने से पूर्व, किसी अधिकार, स्वत्व के विषय में ऐसी घोषणा करेगा तथा ऐसे कार्य करेगा, जैसे कि इस विधान में प्रधान तथा उप-प्रधान के लिये प्रावहित हैं, और निम्नलिखित प्रपत्र के अनुसार प्रधान तथा अपने साथियों की उपस्थिति में शपथ लेगा अथवा गम्भीर निश्चयोक्ति करेगा।]

श्रीमान्, मैं देखता हूं कि प्रपत्र (फार्म) यहां छपा हुआ नहीं है। मैं नहीं जानता आया कि यह कोई पृथक् चिट पर था जो मैंने दी हो, जो रह गई हो या भुला दी गई हो, या खो गई हो, किन्तु जो शपथ मैंने सुझाई थी वह छपी नहीं है। श्रीमान्, मुझे आशा है कि इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी।

***उपाध्यक्षः** इस पर आपत्ति नहीं होगी। किन्तु साथ ही, मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि प्रपत्र कार्यालय में प्राप्त नहीं हुआ था।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** मैं भूल गया हूंगा। मैं कार्यालय को दोष नहीं दे रहा हूं। प्रपत्र तो वही है जो मैं पहले एक बार पढ़ चुका हूं, श्रीमान्। मेरे पास वह पत्र यहां नहीं है, किन्तु मैं जबानी बोल सकता हूं।

***उपाध्यक्षः** आप अपनी वक्तृता को जारी रख सकते हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** श्रीमान् यह ऐसा संशोधन है जिस पर मैं सिद्धान्ततः विभिन्न दृष्टिकोणों से बल देता रहा हूं, कभी प्रधान के विषय में तो कभी मंत्री के लिये, तो कभी प्रधान मंत्री के बारे में। मेरे लिये एक अत्यन्त दुःखद तथा आश्चर्यजनक बात हुई कि कल जब कि मसौदा-समिति के अध्यक्ष ने मेरे एक संशोधन का अत्यंत संतोषजनक रूप से तर्कसंगत उत्तर दिया था, किन्तु इस बात विशेष का उन्होंने उत्तर नहीं दिया; मैं नहीं जानता कि भूल से इसका उत्तर देना रह गया था अथवा उन्होंने जान बूझ कर चुप्पी साध ली थी। मैंने ध्यान करके उन्हें स्मरण कराया कि प्रधान के विषय में इसी प्रकार के संशोधन पर वाद-विवाद के समय उन्होंने मुझे आश्वासन दिया था, या कम से कम, उन्होंने कुछ वचन सा दिया था कि यदि कभी और जब भी यह विषय मंत्रियों के बारे में, जिन्हें विधान के अंतर्गत वास्तविक प्रभावी कार्यपालिका शक्ति होगी, उठ खड़ा होगा, तब वे इस पर विचार कर सकते हैं। मैं कहता हूं, श्रीमान्, कि यह अत्यधिक आश्चर्यजनक बात थी कि मसौदे के ऐसे सतर्क तथा श्रमशील समर्थक, स्पष्टतः स्मरण कराये जाने पर भी चुप रहे, और जब एक माननीय सदस्य ने वास्तव में पूछ लिया कि उस तर्क विशेष का कुछ उत्तर है क्या, तब तो उनकी चुप्पी षड्यन्त्रयुक्त सी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि या तो मसौदा-समिति के माननीय अध्यक्ष के पास कोई उत्तर नहीं है या वे उत्तर देना नहीं चाहते, या उन्होंने ऐसा वचन दे दिया है जो ऐसा परेशानी करने वाला है कि वे उसके विषय में स्मरण दिलाना भी पसंद नहीं करते।

चाहे यह कुछ भी हो, श्रीमान्, मैं इस परिषद् के समक्ष निवेदन करना चाहता हूं कि पत्रों में भी इस विशेष बात की पूर्णतः उपेक्षा कर दी गई है, चाहे ऐसा भूल से ही हुआ हो, जैसे कि यह प्रपत्र यहां नहीं छपा हुआ है,—हां, यह तो मेरी त्रुटि है,—अन्यथा किसी अन्य कारण से इसकी उपेक्षा की गई है इस अत्यन्त आवश्यक बात को जो कि मेरे मतानुसार हमारी सरकार के कार्यवाहन में उसकी शुद्धता, ईमानदारी, सम्मानीयता की प्रतिभूति होती उसे चुप्पी के विशेष षड्यन्त्र द्वारा कुचल दिया गया है। मुझे विश्वास है कि यह ऐसा विषय है, कम से कम जब हम मंत्रियों की बात करते हैं उस सिलसिले में, कि मसौदा बनाने वाला

इसको ध्यान में रखेगा। यह कोई अर्धविराम अथवा विराम बदलने का प्रश्न नहीं है; यह मंत्रिपरिषद् के स्थान पर मंत्रिगण रखने का मामला नहीं है; यह तो ऐसा मामला है, श्रीमान्, जो कि शासन तंत्र की वास्तविक कार्य व्यवस्था के लिये मूलभूत है; अत: श्रीमान्, मुझे आशा है कि जिन्हें इस विधान के निर्माण करने, गढ़ने तथा इसका रूप निश्चित करने, इसे उपयुक्त शब्दों में ढालने और इसे समुचित कार्य योग्य रूप देने की शक्ति है, वे सराहना करेंगे कि किस इच्छा से इस सिद्धान्त को विभिन्न दृष्टिकोणों से उनके समक्ष रखा गया है, जिससे कि वे यह समझ सकें कि हमें अपने विधान में ऐसा कोई बन्धन रखना अपेक्षित है।

श्रीमान्, मुझे कल एक उच्चाधिकारी द्वारा यह परामर्श दिया गया था कि यदि मैं प्रत्येक खंड पर संशोधन रखने के इस अनावश्यक कार्य को नहीं पकड़ता, और यदि मैं कुछ ही सिद्धांतों पर ध्यान से काम करता, तो मैं अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता था। श्रीमान्, मैं अपने संशोधनों की उपयोगिता को इस मापदंड से नहीं मापता कि उनमें से कितने स्वीकार किये गये हैं। मैं अपने संशोधनों की उपयोगिता को इसी पैमाने से मापता हूं कि उनसे कितनी विचारशीलता, रुचि अथवा विरोध का सृजन हुआ है; और इसीलिये वे स्वीकृत हों या न हों, यदि माननीय सदस्यों को, जिनमें भारत सरकार के मंत्री भी हैं, इस विषय पर उत्तेजना से सोचना पड़ जाये; और उस प्रकार की बातों का विशेषत: उत्तर देना पड़ जाये, तो मैं नितान्त सन्तुष्ट हो जाता हूं। किन्तु, यह तो, श्रीमान्, ऐसा मामला है, जिस पर ऐसा प्रतीत होता है, कि मैंने, जानबूझ कर अथवा अनजाने में, ऐसे आदरणीय तथा उच्च परामर्श को स्वीकार तथा कार्यान्वित कर लिया है; और ऐसा प्रतीत होता है कि इस सिद्धान्त पर ही विशेषत: बल दिया है। इस पर मैं बार-बार विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रयास करता रहा हूं। फिर भी, क्या परिणाम हुआ है? मसौदा बनाने वाले तथा उसे स्वीकार करवाने वाले गिरोह को अपने दृष्टिकोण से सहमत करने में असफल ही तो रहा। उनसे समुचित उत्तर की कोई संभावना नहीं है। मैं जो बात रख रहा हूं उसकी वांछनीयता असंदिग्ध है। किन्तु फिर भी इतना ही नहीं है कि मुझे उत्तर नहीं दिया जाता है, वरन् मैं जो भी बात कहता हूं उसे पत्रों में भी दबा दिया जाता है तथा प्रकाशित नहीं किया जाता। यह चुप्पी का षड्यन्त्र, कुछ भी हो, विचित्र है। मुझे विश्वास है कि इस अवसर पर चुप्पी

[प्रो. के.टी. शाह]

तोड़ दी जायेगी; मुझे भरोसा है कि इस अवसर पर मुझे ऐसा उत्तर दिया जायेगा जिसे मुंहतोड़ उत्तर कहा जाता है। और मुझे विश्वास है कि, कम से कम इस बार, उत्तर ऐसा मुंहतोड़ होगा कि मैं कम से कम इस परिषद् में तो, इस प्रकार का संशोधन रखना बंद ही कर दूंगा।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन पर एक संशोधन है। वह सूची संख्या 4 का संख्या 51 है तथा श्री एच.वी. कामत के नाम से है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन संख्या 1332 के स्थान पर जो कि मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह ने अभी-अभी पेश किया है, निम्न संशोधन रख दिया जाये:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (6) के पश्चात्, निम्न नया खंड रख दिया जाये:

'(7) Every Minister including the Prime Minister shall, before he enters upon his office, make a full disclosure to Parliament of any interest, right, share, property or title he may have in any enterprise, business or trade, directly owned or controlled by the State, or which is in any way aided, protected or subsidized by the State; and Parliament may deal with the matter in such manner as it may, in the circumstances, deem necessary or appropriate.'"

[(7) प्रत्येक मंत्री, जिसमें प्रधान मंत्री भी शामिल है, अपना पद ग्रहण करने से पूर्व, संसद को अपने किसी हित, स्वत्व, अंश, सम्पत्ति अथवा अधिकार का ब्यौरा दे देगा, जो कि उसे किसी ऐसे कार्य, व्यापार या वाणिज्य में हो, जिस पर राज्य का नियन्त्रण हो या जिसे किसी प्रकार राज्य से सहायता, रक्षण अथवा आर्थिक मदद मिलती हो; और संसद् उस विषय पर ऐसे तरीके से निर्णय करेगी जोकि वह, उन परिस्थितियों में आवश्यक अथवा उपयुक्त समझे।]

श्रीमान्, मेरा संशोधन उतनी दूर नहीं जाता, जितना कि मेरे माननीय मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह का संशोधन जाता है। मैं तो इस संशोधन द्वारा यही चाहता

हूं कि मंत्री अपना पद ग्रहण करने से पूर्व संसद् को अपने किसी हित, अंश अथवा अधिकार का ब्यौरा दे देगा, जो कि उसे किसी व्यापार, या कार्य में हो, जिस पर कि सरकार का नियंत्रण हो या जिसे किसी प्रकार राज्य से सहायता, रक्षण अथवा आर्थिक मदद मिलती हो और मैं इसे संसद् पर छोड़ देता हूं कि इस विषय में जैसा भी वह कर सके निर्णय करे। संसद् उसे कह सकती है कि वे अधिकार आदि सरकार को बेच दिये जायें; संसद् उसे कह सकती है कि वह उसे अपनी ओर से प्रन्यास रूप में प्रबंध करने के हेतु सौंप दे अथवा रिजर्व बैंक उसे सुरक्षित प्रन्यास के रूप में धारण कर सकता है। मैं संसद् पर छोड़ता हूं, जो कि सार्वभौम विधान-मंडल है कि वह इस मामले को निबटाने के लिये परिस्थितियों के अनुसार सर्वोत्तम उपाय निश्चित करे।

श्रीमान्, मैं आपकी अनुमति से फैक्ट्री कानून में से, जिसकी कि मैंने पहले भी एक बार चर्चा की थी, कुछ पढ़ कर सुनाना चाहता हूं। यह कानून व्यवस्थापिका सभा के गत अधिवेशन में पास हुआ था। इस 1948 के कानून में एक धारा धारा 8 है जिसमें फैक्ट्री इंस्पैक्टरों की नियुक्ति का बन्धान है। और उस धारा के एक खंड में यह लिखा है:

> "No person shall be appointed as Factory Inspector or having been so appointed shall continue to hold office, who is or becomes directly or indirectly interested in the factory or in any process or business carried on therein, or in any patent or machinery connected therewith."
>
> (कोई ऐसा व्यक्ति फैक्ट्री इन्स्पैक्टर नहीं बनाया जायेगा और यदि नियुक्त हो चुका होगा तो उस पद पर नहीं रहेगा, जिसका कि प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से फैक्ट्री में अथवा उसके किसी व्यापार अथवा उपक्रम में अथवा उससे संबंधित किसी मशीन या पेटेन्ट में, स्वार्थ हो।)

श्रीमान्, एक और भी धारा है, धारा 10, जिसमें फैक्ट्री डाक्टरों, प्रमाणकर्ता सर्जनों (शल्यशास्त्रियों) की नियुक्ति के विषय में बन्धान हैं। उसमें भी यह बन्धान है कि:

> *"Certifying Surgeon.* No persons shall be appointed to be or authorised to exercise the powers of a Certifying

[श्री एच.वी. कामत]

Surgeon, or having been so appointed or authorised, continue to exercise such powers, who is or becomes an occupier of a factory or is or becomes directly or indirectly interested therein or in any process or business carried on therein or in any patent or machinery connected therewith or is otherwise in the employ of the factory.' "

(*प्रमाणकर्ता सर्जन:*—किसी ऐसे व्यक्ति को प्रमाणकर्ता सर्जन नियुक्त न किया जायेगा और न प्रमाणकर्ता सर्जन की शक्तियों के निर्वाहन का अधिकार ही दिया जायेगा, अथवा इस प्रकार नियुक्त हो जाने अथवा अधिकार दिये जाने के बाद, उन शक्तियों का निर्वाहन करने दिया जायेगा, जो कि फैक्ट्री का अधिकारी बन गया हो या जिसका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से फैक्ट्री में अथवा उसके किसी व्यापार अथवा उपक्रम में अथवा उससे संबंधित किसी मशीन या पेटेन्ट में स्वार्थ हो, अथवा जो अन्यथा फैक्ट्री की सेवा में हो।)

अब यह स्पष्ट है, यह करकंगन के समान प्रत्यक्ष है, कि किसी फैक्ट्री या सम्बद्ध व्यापार से किसी फैक्ट्री इंस्पैक्टर या प्रमाणकर्ता सर्जन का जितना संबंध होता है, उससे अधिक गहरा संबंध राज्य के मंत्री का इन बातों से होता है। इस संबंध में अच्छाई या बुराई की अधिक संभावना के बनिस्बत इन्स्पैक्टर और फैक्टरी के संबंध में जो चीज एक के लिये अच्छी है वह दूसरे के लिये भी अच्छी होनी चाहिये। यदि यह सिद्धान्त बड़े पैमाने पर लागू किया जाये तो मेरी समझ में नहीं आता कि फैक्टरी कानून में फैक्टरी इन्स्पैक्टर तथा प्रमाणकर्ता सर्जन के लिये जो सिद्धान्त रखा गया है वह राज्य के मंत्रियों पर क्यों न लागू किया जाये।

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं परिषद् को स्मरण कराना चाहता हूं कि दो दिन पूर्व अनुच्छेद 47 पर वाद-विवाद के समय डॉ. अम्बेडकर ने क्या कहा था। मुझे आशा है कि मुझे आपकी, इस बात के लिये भी अनुमति है कि मैं परिषद् को तथा उन्हें भी यह स्मरण कराऊं कि उन्होंने उस वाद-विवाद का उत्तर देते समय किन शब्दों का प्रयोग किया था। प्रधान के विषय में जब ऐसा ही प्रावधान

रखने का संशोधन रखा गया था जिसमें कहा गया था कि राज्य द्वारा नियन्त्रित, सहायता प्राप्त अथवा राज्य के स्वामित्व में स्थित किसी व्यापार अथवा वाणिज्य में उसको जो अधिकार हित, अंश अथवा स्वामित्व है, उन सबकी प्रधान संसद् के समक्ष घोषणा कर देगा और उनसे अपने को अलग कर लेगा, तब उस प्रावधान की चर्चा करते हुए डॉक्टर अम्बेडकर ने कहा था कि:—"यदि ऐसा प्रावधान अपेक्षित ही हो, तो वह प्रधान मंत्री तथा राज्य के अन्य मंत्रियों के संबंध में रखना चाहिये, क्योंकि राज्य के प्रशासन का पूर्ण नियंत्रण उन्हीं के हाथों में होता है। यदि भारत सरकार के अंतर्गत किसी को अपना वैभव बढ़ाने का अवसर प्राप्त है तो वह या तो प्रधान मंत्री को या राज्य के मंत्रियों को ही प्राप्त है और ऐसा प्रावधान"—उनके शब्दों पर ध्यान दीजिये—"ऐसा प्रावधान प्रधान के लिये, उनके लिये होना चाहिये"—उन्होंने यह नहीं कहा कि 'हो सकता है' उन्होंने कहा कि 'होना चाहिये'। मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर इस संशोधन विशेष का उत्तर अत्यधिक विचार के पश्चात् तथा विस्तार से देंगे। मुझे तो आशा नहीं है कि उन्हें इस उलझन से निकलने का कोई मार्ग मिलेगा, जो कि पिछले अवसर पर उन्हीं द्वारा प्रयुक्त शब्दों तथा भाषा से पैदा हो गई है। आशा है कि वे अपने शब्दों पर स्थिर रहेंगे जो उन्होंने दो ही दिन पहले कहे थे, वर्ष दो वर्ष पूर्व नहीं; और यह भी आशा है कि इन्हीं दो दिनों में अपने विचार बदल लेने के लिये उन पर जोर नहीं डाल दिया गया होगा, न उन्हें ऐसा करने का मौका या अवसर ही मिला होगा और न उन्हें ऐसा करने के लिये समझाया ही गया होगा। परिषद् को और डॉक्टर अम्बेडकर को यह स्मरण कराने के पश्चात् कि उन्होंने दो दिन पूर्व क्या कहा था, मैं नहीं समझता कि मुझे और कुछ कहना शेष है, किन्तु मेरा ख्याल है कि डॉक्टर अम्बेडकर अपने विचार पर दृढ़ रहने में हिचकिचायेंगे नहीं। वह कोई पुराना नहीं, वरन् अत्यन्त अर्वाचीन विचार है, और आशा है वे इस संशोधन को स्वीकार कर लेंगे।

(संशोधन संख्या 1333, 1334 और 1335 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** अब इस अनुच्छेद पर व्यापक वाद-विवाद हो सकता है।

[उपाध्यक्ष]

मेरा सुझाव यह है कि अगले दो संशोधन संख्या 1336 और 1337 भी ऐसे ही विषय से संबंधित हैं और उन पर यहीं विचार कर लिया जाये। प्रोफेसर शाह, क्या आप कृपया अपने संशोधन संख्या 1336 को अभी पेश करेंगे?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** वह तो एक नया अनुच्छेद है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** यह नया अनुच्छेद है; यह संशोधन नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** जैसा आप ठीक समझें।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** मैं तो आपकी आज्ञा पर हूं। यदि आप मुझे अभी इसे पेश करने के लिये कहें तो मैं पेश कर दूंगा।

***उपाध्यक्ष:** मैंने सोचा था कि व्यापक वाद-विवाद साथ ही हो सकता है। जैसा कि माननीय सदस्यों को पता ही है आज हमें अपने मुसलमान भाइयों को जुम्में की नमाज पढ़ने की सुविधा देने के लिये परिषद् को एक बजे स्थगित कर देना है। यदि इस पर कोई आपत्ति न हो तो मैं चाहता हूं कि प्रोफेसर के.टी. शाह अपना संशोधन अभी पेश कर दें।

***श्री अमिय कुमार घोष** (बिहार : जनरल): श्रीमान् यह एक नया अनुच्छेद है। हम पहले अनुच्छेद 62 को समाप्त कर के, तत्पश्चात् इस नये अनुच्छेद को ले सकते हैं।

***उपाध्यक्ष:** मान लीजिये, हम एक बार कानून की अच्छाइयों को भूल जाते हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:

'62-A. No one shall be elected or appointed to any public office including that of the President, Governor, Minister of the Union or of any State of the Union, Judge of the Supreme Court or of any High Court in any State in the Union, who—

(a) is not able to read or write and express in the English language; or

(b) within ten years from the day when this Constitution comes into operation, is not able to read or write or express himself in the National language; or

(c) or who has been found guilty at any time before such election or appointment of any offence against the safety, security or integrity of the Union; or

(d) of any offence involving moral turpitude and making him liable on conviction to a maximum punishment of two years imprisonment; or

(e) or who has not, prior to such election or appointment served in some public body, or done some form of social work, or otherwise proved his fitness, capacity and suitability for such election or appointment as may be laid down by Parliament by law in that behalf.' "

[62-ए ऐसा कोई व्यक्ति किसी सरकारी पद के लिये, जिनमें प्रधान, गवर्नर, संघीय मंत्री अथवा संघ के किसी राज्य के मंत्री, सर्वोच्च न्यायालय के अथवा संघ के किसी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्ष के पद भी सम्मिलित हैं, नियुक्त अथवा निर्वाचित नहीं किया जायेगा: जो—

(क) अंग्रेजी भाषा में लिखने, पढ़ने अथवा अपने विचार व्यक्त करने के योग्य न हो; अथवा

(ख) इस संविधान के प्रवर्त्तन में आने के दस वर्ष के भीतर ही राष्ट्रभाषा में पढ़ने, लिखने अथवा अपने विचार व्यक्त करने के योग्य न हो; अथवा

(ग) किसी समय ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति से पूर्व संघ की सुरक्षा, संरक्षा अथवा अखंडता के विरुद्ध किसी अपराध के लिये दोषी सिद्ध हो चुका हो; अथवा

(घ) ऐसे नैतिक पतन संबंधी अपराध का दोषी सिद्ध हो चुका हो जिस पर उसे दो वर्षों से अधिक कारावास का दंड दिया जा सकता हो; अथवा

(ङ) ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति के पूर्व किसी सार्वजनिक संस्था में सेवाकार्य न कर चुका हो, अथवा किसी प्रकार का सामाजिक कार्य

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

न कर चुका हो, अथवा ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति के लिये अन्यथा अपनी योग्यता क्षमता और उपयुक्त सिद्ध न कर चुका हो, जैसे कि इस विषय में संसद् कानून द्वारा व्यवस्था करे।]

श्रीमान् ये कुछ बातें हैं जो मेरे मतानुसार अवश्यमेव पूरी होनी चाहियें; अथवा प्रधान मंत्री, गवर्नर, न्यायाध्यक्ष आदि जैसे पदों पर प्रतिष्ठित होने वाले व्यक्ति के लिये ये बातें निर्योग्यताओं के रूप में लिपिबद्ध हो जानी चाहियें। मैं जो बातें रख रहा हूं वे प्रथम दृष्टिपात पर सम्भवत: ऐसी लगें कि उन्हें विधान में रखना शायद कुछ अनुपयुक्त सा दिखाई पड़े। उदाहरणार्थ मैं इसे खुद स्वीकार करता हूं कि मेरे संशोधन का पहला खंड यानी जिसमें कहा गया है, अंग्रेजी भाषा में लिखने, पढ़ने और अपने विचारों के व्यक्त करने में सामर्थ्य होना चाहिये अनुपयुक्त ही दिखाई देता है। किन्तु, श्रीमान्, वर्तमान अवस्था में, जैसी स्थिति में हम हैं, अपनी राष्ट्रभाषा की अनुपस्थिति में, यह अवश्य है कि सदस्यगण इस योग्य हों कि वे संविधान संबंधी किसी जटिल विषय पर, अथवा किसी कानून संबंधी अथवा भविष्य में संसद् के समक्ष पेश होने वाले किसी विधि-कार्य संबंधी किसी पेचीदे विषय पर अपने विचारों का आदान-प्रदान वार्तालाप के किसी सर्वज्ञात माध्यम द्वारा कर सकें। इस दृष्टिकोण से देखते हुए, और यह प्रावधान करने की इच्छा न रखते हुए कि अंग्रेजी इस देश और इस उप-महाद्वीप में सदैव के लिये वार्तालाप का माध्यम रहे, मेरे विचार में यह बन्धान करना उपयुक्त ही रहेगा कि जब तक वे लोग, जो संसद् के किसी सदन के सदस्य बने या चुने जायें किसी सर्वज्ञात भाषा में अपने विचारों को व्यक्त न कर सकें, जिसे कि उनके अन्य मित्र समझ सकें सदस्य न चुने जायेंगे। ऐसा बन्धान न करना अनुपयुक्त होगा और देश-हित के प्रतिकूल होगा।

श्रीमान्, मैं भली प्रकार जानता हूं कि इस विषय पर मतान्तर हो सकता है, ईमानदारी से मतान्तर हो सकता है और शायद आवेशपूर्ण मतान्तर भी हो सकता है। किन्तु श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि प्राय: हम सभी जानते हैं कि इस परिषद् में ऐसी भाषा में वक्तृता हो जाती है जो इस परिषद् के अन्य सदस्यों के कानों या मस्तिष्कों के लिये पूर्णत: निरर्थक ही होती हैं। जो उस भाषा को नहीं समझ पाते उनकी तथा वक्ताओं की भी भलाई के लिये ही मैं यह निवेदन करता हूं कि कोई सर्वज्ञात माध्यम ही प्रयुक्त होना चाहिये, जिससे कि परिषद् मैं सब उसे

समझ सकें और उत्तर दे सकें। मैं तो यह नहीं समझता कि इस परिषद् के किसी सदस्य का काम केवल हाथ उठाना ही है। मुझे तो विश्वास है कि जो कुछ भी कहा जाता है उसे प्रत्येक सदस्य विवेक से और ध्यान से समझ पाता है; अतः परिषद् के लिये यह एक हानि की बात होगी यदि परिषद् में कही गई कोई बात, भाषा न समझने के कारण अथवा वाग्धारा न जानने के कारण, परिषद् के किसी वर्ग के समझ में न आ सके। श्रीमान्, केवल इसी कारण मैं कम से कम आगामी दस वर्षों के लिये, यह बन्धान इस विधान में रखना चाहता हूं।

अगले खंड में मैं राष्ट्रभाषा के विषय में भी ऐसा ही बन्धान रखना चाहता हूं। इस विषय पर भी मेरी धारणा उतनी ही प्रबल है कि एक बार हम प्रारंभिक कठिनाई को पार कर लें, एक बार हम राष्ट्रभाषा का निश्चय कर सकें, तो फिर दस वर्ष की अवधि में,—और मेरे विचार में इस कार्य के लिये यह अवधि पर्याप्त है,—प्रत्येक सदस्य से आशा की जानी चाहिये कि वह राष्ट्रभाषा को जाने, और उसे लिख सके, पढ़ सके तथा उसमें अपने विचार व्यक्त कर सके। यहां भी आधारभूत तर्क वही है जो कि पहले खंड में था, कि लोगों को किसी ऐसे सर्वज्ञात माध्यम द्वारा अपने विचारों को व्यक्त करने की क्षमता होनी चाहिये, जिसे उनके सहयोगी सदस्य समझ सकें। अतः इस बात को अनिवार्य करार दे देना चाहिए कि हमारी जो राष्ट्रभाषा होगी वह केवल नाम के लिए नहीं, केवल इसलिए नहीं कि लोग भाषा-संबंधी कानून का पालन करने के बजाय अधिकतः उसका उल्लंघन ही किया करें बल्कि वह एक सजीव भाषा होगी और सदस्यों को उसी में बोलना होगा ताकि इस सभा में या भावी सभाओं में या संसद् में हम अपने विचारों का आदान-प्रदान उसी लालित्य एवं पारिभाषिक रूप में कर सकें जो कि ऐसे कानूनी प्रपत्रों के लिए अपेक्षित है। अतः मेरे विचार में इस प्रावधान के समर्थन में अधिक तर्कों की आवश्यकता नहीं है। मेरे संशोधन के प्रथम अथवा प्रमुख खंड में वर्णित अथवा उल्लिखित उच्च पदों के इच्छुकों के लिये ऐसी योग्यताएं अवश्य अपेक्षित होनी चाहियें।

ऐसे उच्च पदों के इच्छुक लोगों की नैतिक उच्चता के संबंध में जो खंड है वह भी स्वयं-स्पष्ट है और मुझे विश्वास है कि ऐसे बन्धान पर कोई विरोध नहीं हो सकता और न होगा ही। मुझे भय है कि यदि हम ऐसा मानने लगें कि 'यह तो है ही' जैसा कि इस विषय में कहा जा सकता है कि 'यह तो है ही'

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

तो हम ऐसी कठिनाइयों अथवा परेशानियों में पड़ जायेंगे, जिन्हें आरंभ से ही दूर कर देना हमारे लिये अच्छा होगा।

यह भी, श्रीमान्, मैं कह सकता हूं कि एक अन्य आधारभूत सिद्धान्त है, जिस पर मैंने बल दिया है, जैसे कि मुझे एक उच्चाधिकारी द्वारा परामर्श दिया गया था, किन्तु इसका भी कोई प्रभाव नहीं हुआ, कम से कम उन लोगों पर तो नहीं हुआ जो कि अन्यथा धारणा वाले हैं।

अन्ततः श्रीमान्, मैं इस शर्त को आवश्यक समझता हूं कि जो व्यक्ति ऐसे विधान-मंडलों के सदस्य बनने के अथवा ऐसे उच्च पदों पर प्रतिष्ठित होने के इच्छुक हों उनमें कुछ ठोस योग्यतायें होनी चाहियें। मैं केवल शिक्षा संबंधी योग्यताओं की ही बात नहीं सोच रहा हूं। बल्कि योग्यता द्योतक उन गंभीर परिपक्व तथा गूढ़ गुणों की बात सोच रहा हूं, जो रचनात्मक कार्य, सामाजिक सेवा तथा अन्य कार्यों के आधार पर हमें प्राप्त होते हैं। जो कि शैक्षणिक योग्यताओं से भी अधिक ये गुण ही इस बात के प्रमाण होते हैं कि कोई व्यक्ति उन पदों के लिये उपयुक्त तथा योग्य है अथवा नहीं। शैक्षणिक योग्यताएं तो प्रायः अच्छी स्मरण शक्ति के कारण ही प्राप्त होती हैं, सदाचार, अथवा व्यक्ति के शुभ विचारों के कारण नहीं, और वे उन उत्तरदायित्वों के लिये उसकी वास्तविक, विशेष उपयुक्तता ज्ञापित करने का कोई साधान अथवा माध्यम नहीं होती। मैं जो पहचान अथवा उपाय सुझा रहा हूं उससे अधिक अच्छी तरह और विश्वसनीय रूप से यह पता लग सकेगा कि कोई व्यक्ति-विशेष उन पदों के योग्य है या नहीं जिनके वे इच्छुक हैं या जो उन्हें सौंपे जा सकते हैं।

श्रीमान्, इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव को परिषद् में पेश करता हूं।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन पर दो संशोधन हैं। एक संशोधन चतुर्थ सूची में संख्या 52 है और मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के नाम में है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1336 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 62-ए में 'सर्वोच्च न्यायालय के अथवा संघ के

किसी राज्य के उच्च न्यायालय के 'न्यायाध्यक्ष' ये शब्द हटा दिये जायें।"

श्रीमान्, प्रस्तावित अनुच्छेद 62-ए अत्यन्त व्यापक है। वास्तव में इस संशोधन द्वारा प्रोफेसर शाह ने अपनी स्वाभाविक विचारशीलता से, सरकारी सेवकों और विशेषत: मन्त्रियों, प्रधानों और यहां तक कि सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्षों के लिये कुछ शर्तें रखना चाहा है। वे उनके लिये जो शर्त रखना चाहते हैं, वे ये हैं: (क) कि वे अंग्रेजी भाषा पढ़ने, लिखने तथा उसमें अपने विचार व्यक्त करने के योग्य हो; तत्पश्चात् कदाचित विकल्प में, (ख) उन्हें राष्ट्रभाषा का ज्ञान होना चाहिये, और (ग) और (घ) वे किसी अपराध के दोषी सिद्ध न हो चुके हों और (ङ) वे प्रमाणित उपयुक्तता के व्यक्ति होने चाहियें।

श्रीमान्, इस संशोधन के पीछे जो आशय है, उसके विषय में मुझे कुछ नहीं कहना है। मैं भी उस विचार का समर्थन करता हूं। किन्तु मेरा यह विचार अवश्य है कि उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्ष इन शर्तों से परे होने चाहियें—इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं ऐसा चाहता हूं कि वे निरक्षर हों, या अंग्रेजी अथवा राष्ट्रभाषा में अपने विचार व्यक्त करने के अयोग्य हों, या यह कि उनका नैतिक अपराधों से संबंध रहा हो अथवा यह कि उनके लिये उपयुक्त सिद्ध होना अपेक्षित नहीं है,—ऐसा कदापि नहीं है। किन्तु मेरा निवेदन है कि विधान के मसौदा में ही हमने कुछ मापदण्ड निश्चित कर दिये हैं जिनके आधार पर ही उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाध्यक्ष नियुक्त होंगे। अनुच्छेद 193 के खंड (2) में हमने स्पष्ट बन्धान रखा है कि ऐसा ही व्यक्ति उच्च न्यायालय में न्यायाध्यक्ष नियुक्त हो सकता है जो कतिपय वर्षों तक न्यायविभाग में अधिकारी रहा हो या अधिवक्ता (advocate) रहा हो; और अनुच्छेद 103 के खंड (6) के अनुसार ऐसा कोई व्यक्ति सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं हो सकता जो कि उच्च न्यायालय का न्यायाध्यक्ष न रहा हो या एक विशेष अवधि तक अधिवक्ता न रहा हो। मुझे विश्वास है कि बहुत समय तक जिसका कि हम अभी अनुमान कर सकते हैं, वकील तो साक्षर होंगे ही और अंग्रेजी में अपने विचार व्यक्त करने के योग्य भी होंगे ही। इस समय हमारी परिषद् में बहुत से वकील हैं,—डॉक्टर अम्बेडकर, श्री के.एम. मुन्शी, श्री अनंतशयनम् आयंगर और कई अन्य भी हैं जैसे अल्लादी कृष्णास्वामी

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

अय्यर (**एक सदस्य:** और आप भी), हां, मैं छोटा-सा व्यक्ति भी। इस देश में बहुत से वकील हैं और मुझे विश्वास है कि आगामी बहुत काल तक तो वे साक्षर होंगे ही।

कदाचित् यह तो निस्संदेह मान लिया जा सकता है कि, अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के प्रचार के फलस्वरूप, वकील लोग साक्षर होंगे, और यदि कोई साक्षर नहीं होगा तो वह वकील नहीं हो सकता। वकील बनने के लिये और अधिवक्ता भी बनने के लिये, साक्षरता और सामान्य ज्ञान की कुछ परीक्षायें पास करनी होती हैं। अत: यदि कोई साक्षर नहीं होगा तो वह अधिवक्ता नहीं बन सकता, और इस कारण वह उच्च न्यायालय का न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं हो सकता और सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाध्यक्ष भी नियुक्त नहीं हो सकता।

तत्पश्चात् उनके राष्ट्रभाषा में अपने विचार व्यक्त करने के विषय में, मेरी धारणा है कि यदि और जब कभी अंग्रेजी को हटाया जायेगा तो न्यायाध्यक्षों और अभिभाषकों को न्यूनतम अपेक्षित योग्यता अवश्य प्राप्त करनी होगी और उन्हें राष्ट्रभाषा में अपने विचार व्यक्त करने योग्य होना चाहिये। जितने समय की पूर्वकल्पना की जा सकती है उसमें अधिवक्ता (advocate) तथा उच्च अथवा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्ष अवश्यमेव, अंग्रेजी भाषा में जब तक वह भाषा प्रचलित रहे, और तत्पश्चात् राष्ट्रभाषा में अपने विचार व्यक्त करने के योग्य होंगे।

मुझे यह भी विश्वास है कि कोई व्यक्ति, जो नैतिक पतन संबंधी किसी अपराध का दोषी हो, उच्च न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं हो सकता। पहले तो वह अधिवक्ता ही नहीं बन सकेगा और इसके फलस्वरूप न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं हो सकेगा। अत: न्यायाध्यक्षों के लिये इस प्रकार का बन्धान नितान्त अनावश्यक है, यद्यपि हम श्री कामत के अथक प्रयत्नों के आभारी हैं जिन्होंने कल यहां यह बात खोज निकाली कि किसी स्थान पर कोई ऐसा मंत्री नियुक्त हुआ है जो पहले कभी चोर-बाजारी के लिये दंडित हो चुका था। यद्यपि इस प्रकार के मंत्री नियुक्त हो सकते हैं; संभवत: न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं हो सकते। मैं हार्दिक आशा करता हूं कि नैतिक पतन संबंधी

अपराधों पर पूर्व दंडित अथवा निरक्षर न्यायाध्यक्षों को नियुक्त करने की संभावना पर विचार करने के बजाय तो हमारा देश स्वतंत्र ही न रहे तो बुरा नहीं है।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मेरे माननीय मित्र की यह धारणा है कि चोर-बाजारी के कारण दंडित व्यक्ति भी मंत्री नियुक्त किया जा सकता है? मुझे आश्चर्य है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैंने कोई व्यक्तिगत विचार प्रकट नहीं किया है। मैंने तो सावधानी के साथ कहा था कि हम श्री कामत के परिश्रम के लिये आभारी हैं, जिन्होंने यह खोज की है। वास्तव में उन्होंने ही कल कहा था कि किसी स्थान विशेष पर कोई मंत्री नियुक्त किया गया है जो चोर-बाजारी संबंधी नैतिक पतन के अपराध पर दंडित हो चुका था। अत: ऐसी घटना की कल्पना की जा सकती है। ऐसी धारणा मंत्री के संबंध में की जा सकती है पर न्यायाध्यक्ष के संबंध में नहीं। अत: मेरा निवेदन है कि न्यायाध्यक्षों के संबंध में इन शब्दों को निकाल देना चाहिये। वास्तव में उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्षों के लिये ऐसा कहना ही अत्यन्त अपमानजनक होगा कि किसी ऐसे व्यक्ति को न्यायाध्यक्ष नियुक्त नहीं करना चाहिये जो साक्षर न हो अथवा जो पूर्व दंडित हो। अत: इन शब्दों को निकाल देना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** इस संशोधन पर अगला संशोधन संख्या 73 है जो पंचम सूची में से है। किन्तु इसे पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती क्योंकि इसका आशय पहले किसी संशोधन में आ चुका है।

तत्पश्चात् संशोधन संख्या 1337 है, जो श्री भारती के नाम में है।

(संशोधन संख्या 1337 पेश नहीं किया गया।)

अब इस अनुच्छेद पर व्यापक वाद-विवाद हो सकता है! श्री सिधवा!

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद पर बहुत से संशोधन रखे गये हैं, विशेषत: खंड (1), (2) और (5) के संबंध में, जिससे इस पर काफी वाद-विवाद हो गया है। बाकी खंड तो महज रस्मी ही हैं। खंड (1) में तो इतना ही है कि प्रधान, प्रधान मंत्री को नियुक्त करेगा और प्रधान मंत्री अपने सहयोगियों अर्थात् अन्य मंत्रियों को नियुक्त

[श्री आर.के. सिधवा]

करेगा। बहुत से संशोधन पेश किये गये हैं जिनमें कहा गया है कि प्रधान को उसी व्यक्ति को बुलाना चाहिये जो परिषद् का विश्वासपात्र हो और जो कि स्थिर मंत्रिमंडल का निर्माण कर सकता हो। श्रीमान्, यह निस्संदेह बहुत अच्छा सुझाव है और अपने पूर्व अनुभव से हमें यह ज्ञात है कि कई प्रान्तों में गवर्नरों ने जानबूझ कर, अपनी सुविधा और अपने मनोरथ के लिये, ऐसे व्यक्ति को मंत्रिमंडल बनाने के लिये आमंत्रित किया है जो कि परिषद् का विश्वासपात्र नहीं था, और जिसे कठिनाई से थोड़े से अल्पसंख्यकों का समर्थन प्राप्त था। हमारे पास बंगाल, आसाम, उड़ीसा, सिंध और पंजाब के उदाहरण हैं। और इन गवर्नरों ने ऐसे व्यक्तियों को नियुक्त करके जो कि परिषद् के तनिक भी विश्वासपात्र नहीं थे, आफत पैदा कर दी और कठिनाइयां उत्पन्न कर दीं। और इसका दूसरा पहलू क्या था? जब 1935 के विधान के अन्तर्गत ऐसे मंत्रिमंडल बन गये, तो परिषदों का कोई अधिवेशन नहीं बुलाया जा सका, जब तक कि वार्षिक बजट-अधिवेशन का समय न आया। इस तरह वह व्यक्ति पूरे एक वर्ष तक मंत्रिमंडल का आनन्दोपभोग करता रहा और जब तक बजट का समय आता, तब वह सदस्यों को विभिन्न प्रकार के पद तथा घूस देकर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बना लेता था, और यह दिखा सकता था कि वह परिषद् का विश्वासपात्र है। हां, मैं यह तो समझता हूं कि नये संविधान के अधीन, परिस्थितियां बदल गई हैं, और निर्देशन-पत्र में जो कि अनुसूची 3-क में दिया हुआ है, यह कहा गया है कि प्रधान मंत्री ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो सभा का विश्वासपात्र हो। मैं जानता हूं कि यह अनुसूची भी विधान का ही भाग है। अतः मैं कहता हूं कि यह अच्छा सुझाव है। अतीत में जो कुछ हो चुका है उसे ध्यान में रखते हुए, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं, और इसका कारण यह है कि हमारे गवर्नर और हमारे प्रधान अनुत्तरदायी व्यक्ति नहीं होंगे। यदि कोई प्रधान ऐसे व्यक्ति को बुलायेगा जो कि सभा का विश्वासपात्र न हो तो प्रधान पर महाभियोग लगा दिया जायेगा और प्रधान मंत्री को भी पदच्युत कर दिया जायेगा।

श्रीमान्, मैं जानता हूं कि भूतकाल में, ऐसा हुआ है कि अविश्वास प्रस्ताव पर विचार करने हेतु विधान-मंडल का अधिवेशन बुलाने के लिए गवर्नरों से मांग की जाती थी किन्तु गवर्नर अधिवेशन नहीं बुलाता था। पर आज स्थिति भिन्न है। यदि इस प्रकार की त्रुटि हो जाये तो प्रधान को अधिवेशन बुलाना होगा, अन्यथा

उस पर कई निर्योग्यताएं लागू हो जायेंगी, जो हमने विभिन्न अनुच्छेदों में रखी हैं। अत:, यद्यपि मेरे मन में भी वही आशंकाएं हैं जो माननीय सदस्यों के हृदयों में हैं, तद्पि मैं उस विचार का समर्थन नहीं करना चाहता जिसका भूत में अस्तित्व था, और मैं अनुच्छेद के मसौदे में उल्लिखित खंड (1) का समर्थन करता हूं।

दूसरा महत्त्वपूर्ण खण्ड (5) है, जिसमें कहा गया है कि कोई मंत्री, जो 6 मास तक संसद् के किसी सदन का सदस्य न हो, उस अवधि के उपरान्त मंत्री न रहेगा। ऐसा खंड 1935 के विधान में था और इसे वहीं से लिया गया है। मैं चाहता हूं कि ऐसा खंड हमारे विधान में नहीं होना चाहिये, और इसका सीधा कारण है कि हमारे नये विधान-मंडल में लगभग 500 सदस्य होंगे, और यदि हम किसी विषय का दक्ष या विषय विशेष का ज्ञान रखने वाला मंत्री उनमें से आवश्यकतानुसार प्राप्त नहीं कर सकते, तो यह विधान-मंडल पर कलंक समान है कि उसमें विशेष विषय का ज्ञान वाला एक भी व्यक्ति नहीं है। इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, हमारा सारा विधान ग्रेट ब्रिटेन की सांसदिक प्रणाली पर बना हुआ है और वहां निर्वाचन पार्टी-लाइन पर होते हैं। वहां वे इस बात का ध्यान रखते हैं कि विशिष्ट विषय का ज्ञान रखने वाले जिन व्यक्तियों को मंत्री बनाना है उन्हें दल की ओर से खड़ा किया जाये और उन्हें निर्वाचित कराया जाये। हम भी इस विधान के अंतर्गत ऐसे ही दल प्रणाली से निर्वाचन करेंगे। और हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि विशिष्ट ज्ञान संपन्न व्यक्तियों को चुनाव में खड़ा किया जाये। श्रीमान्, मेरी समझ में नहीं आता कि कानूनमंत्री और अर्थमंत्री शायद इन दो विषयों के अतिरिक्त, जिनमें कि कुछ विशिष्ट विषयों के ज्ञान की आवश्यकता है, शेष मंत्रियों को किसी विशेष विशिष्ट योग्यता की क्या अपेक्षा है? उसमें तो सहज ज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान, योग्यता, उद्यमशीलता, दृढ़ संकल्प, दृढ़ निश्चय और आगे बढ़ने की शक्ति—आदि गुण ही अपेक्षित हैं। सैद्धान्तिक ज्ञान की अपेक्षा ये गुण ही उसमें होने चाहियें। हम जानते ही हैं कि सैद्धान्तिक ज्ञान वाला व्यक्ति व्यावहारिक राजनीति में असफल होता है। मेरे मतानुसार तो व्यावहारिक ज्ञान वाला मनुष्य केवल सैद्धान्तिक ज्ञान वाले व्यक्ति से कहीं अच्छा है। श्रीमान्, यदि यह भी मान लिया जाये कि हमें एक सैद्धान्तिक ज्ञान वाले व्यक्ति की अपेक्षा है, तो मुझे विश्वास है कि चुनाव में भाग लेने वाला दल यह

[श्री आर.के. सिधवा]

ध्यान रखेगा कि ऐसे व्यक्ति को दल की ओर से खड़ा किया जाये। इसके अतिरिक्त मैं इसे विधान-मंडल का अपमान समझता हूं कि हमें एक मंत्री-विशेष के पद की पूर्ति करने के लिये सदस्यों के अतिरिक्त किसी को लेना पड़े। ऐसी बातें अब तक होती रही हैं। किन्तु आगे से यह अनावश्यक होगा कि मंत्रिमंडल में, विधान-मंडल के समान ऐसे सदस्यों का सम्मिश्रण हो, जिनमें से कुछ शक्ति-आरूढ़ दल का समर्थन न भी करते हों। अत: मैं यह अनुभव करता हूं कि इस मामले पर वास्तव में इसी दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये। अंग्रेजी मंत्रिमंडल में मैंने कभी ऐसा नहीं देखा कि ऐसा व्यक्ति जो कि संसद् का सदस्य न हो मंत्रिमंडल में लिया जाये। पहले चाहे कुछ भी हुआ है, किन्तु आज तो यही स्थिति है। यह तर्क किया जा सकता है कि जो संसद् का सदस्य नहीं होगा वह तो मंत्रिमंडल में केवल छ: ही मास रहेगा। मुझे तो बाहरी व्यक्ति के एक दिवस भी मंत्रिमंडल में रहने पर आपत्ति है। हम असदस्य को छ: मास तक क्यों रखें जब तक कि सदस्यों में हमें उपयुक्त व्यक्ति मिल सकते हैं? अत: मैं यह कहता हूं कि इस खंड को निकाल दिया जाये।

अब अपने मित्र प्रोफेसर शाह के अंतिम संशोधन के विषय में मैं कह सकता हूं कि वह प्रशंसनीय है। इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। किन्तु मेरे विचार में उन्होंने, यह कह कर कि गवर्नर, प्रधान और मंत्रियों के पद सर्वप्रथम उन लोगों को दिये जाने चाहियें जो अंग्रेजी जानते हों और जो, दस वर्ष के भीतर, राष्ट्रभाषा सीख लें, अंग्रेजी को अत्यधिक महत्व दे दिया है। ऐसे खंड के विषय में मेरी प्रतिक्रिया यह है कि केवल वे ही व्यक्ति प्रधान, गवर्नर तथा मंत्री नियुक्त होने चाहियें जो कि आरंभ से ही अंग्रेजी और राष्ट्रभाषा दोनों जानते हों। इन उच्चपदधारियों का कार्यकाल पांच वर्ष है और हमने एक खण्ड पास कर दिया है जिसमें हमने कहा है कि गवर्नर एक बार चुना जायेगा और एक बार और चुना जा सकेगा, अर्थात् वह कुल दस वर्ष तक रह सकेगा। यदि प्रोफेसर साहब के संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये, तो उसका यह अर्थ होगा कि जब तक गवर्नर या प्रधान को राष्ट्रभाषा सीखनी होगी, उससे पहले वह अवकाश ही प्राप्त कर लेगा। यद्यपि मैं इसे उचित नहीं समझता कि इस बात को विधान में रखा

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 4 जनवरी सन् 1949 ई.

भारतीय विधान परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे उपाध्यक्ष महोदय (डॉ. एच.सी. मुकर्जी) की अध्यक्षता में समवेत् हुई।

विधान का मसौदा-(जारी)

अनुच्छेद 67-(जारी)

***उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुकर्जी):** सभा का कार्य आरम्भ करने से पूर्व मुझे माननीय सदस्यों को यह सूचित करना है कि कल यह सूचना प्राप्त हुई थी कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्य किस प्रकार दर्शकों की दीर्घाओं में और बरामदों में प्रवेश प्राप्त करके विघ्न उपस्थित करेंगे। सौभाग्य से इसकी रोकथाम कर दी गई है। क्या मैं माननीय सदस्यों से यह प्रार्थना कर सकता हूं कि वे दर्शकों के कार्डों को केवल उन लोगों के लिये मंगवायें, जिन्हें वे स्वयं जानते हों, ताकि हम निर्विघ्नता से अपना कार्य कर सकें?

अब हम अनुच्छेद 67 पर विचार-विमर्श आरम्भ करेंगे। सूची में प्रथम संशोधन, संशोधन संख्या 1411 है। क्योंकि यह केवल शाब्दिक संशोधन है, इसलिये इसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती।

अब हमारे सामने संशोधन संख्या 1412, 1413 प्रथम भाग, 1414 प्रथम भाग और 1415 प्रथम भाग हैं। ये एक समान हैं। संशोधन संख्या 1415, जो काजी सैयद करीमुद्दीन के नाम से है, उपस्थित किया जा सकता है।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री महावीर त्यागी]

मि. पोकर साहिब, आदि भी सोचते हैं, कि प्रधान मंत्री और उनका मंत्रिमंडल विधान-मंडल के प्रतिनिधि हैं। राजनैतिक दृष्टि से और जनतंत्र के दृष्टि बिन्दु से, विधान-मंडल का प्रतिनिधित्व करने का दायित्व उनका नहीं है। विधान-मंडल का प्रतिनिधि यहां सभापति है। व्यवस्थापिका तो सभापति के द्वारा ही अपने विचार व्यक्त कर सकती है। प्रधान मंत्री बहुसंख्यक दल का प्रतिनिधि होता है, अतः वह सारी व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचित नहीं हो सकता। यदि प्रधान मंत्री समस्त सभा द्वारा निर्वाचित हो तो उसे नैतिक रूप से सारी सभा के प्रति उत्तरदायी होना पड़ेगा। प्रधान मंत्री सारी सभा के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। वह केवल उसी बहुसंख्यक दल के प्रति उत्तरदायी होता है, जिसने उसे यहां भेजा है। यद्यपि वह विरोधी दल के विचारों का भी ध्यान रखता है पर वह समस्त व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचित नहीं हो सकता। यदि वह सारी व्यवस्थापिका द्वारा निर्वाचित हो तो दल के नेता के रूप में उसकी स्थिति समाप्त हो जायेगी, क्योंकि जिन लोगों ने उसके विरुद्ध मतदान किया है वे भी दावा करेंगे कि वह उनका प्रतिनिधि है। जैसे कि किसी निर्वाचन क्षेत्र द्वारा निर्वाचित सदस्य को उन लोगों के विचारों का भी प्रतिनिधित्व करना होता है जिन्होंने उसके विरुद्ध मत दिये हैं प्रधान मंत्री को भी, यदि वह समस्त सभा द्वारा निर्वाचित हो, विरोधी दल का भी प्रतिनिधित्व करना होगा। ऐसा निर्वाचन दल-प्रणाली पर चलने वाले जनतंत्र के सिद्धांतों के विरुद्ध है। वह सभा के बाहर जनसाधारण की व्यापक इच्छा का प्रतिनिधि होता है, जनता के उस अत्यधिक बहुमत का प्रतीक होता है, जिन्होंने उसके दल को अपने पसंद का दल कह कर मतदान दिया है। हां, यद्यपि वह कर्त्तव्य समझ कर अल्पसंख्यकों का रक्षण करता है, किन्तु वह केवल बहुसंख्यक दल का ही प्रतिनिधि रहता है। किन्तु प्रधान का मामला सर्वथा भिन्न है। वह सारे दलों द्वारा निर्वाचित होता है। जिसका अर्थ हुआ कि वह जनता के सारे निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा चुना जाता है। अतः वह समानरूपेण सबका संरक्षक होता है। राज्य के प्रमुख के नाते, उसी के द्वारा जनता की सामूहिक इच्छा व्यक्त होती है। मंत्रियों को जनता की इच्छा को प्रतिध्वनित करने के लिये कहा जाना चाहिये। प्रधान में सर्वाधिक प्रतिनिधित्व निहित होता है। अतः ऐसे प्रधान को मंत्रियों के नियुक्त करने का अधिकार होगा। हमने इस बात को विधान

में प्रधान के लिये निदेश पत्र की व्यवस्था करके स्पष्ट कर दिया है जिसमें कहा गया है कि जब वह मंत्रियों को नियुक्त करेगा, तब वह इस बात को ध्यान में रखेगा कि वे व्यवस्थापिका के विश्वास के योग्य हैं। किन्तु नियुक्ति प्रधान द्वारा की जानी चाहिये, क्योंकि वही एक व्यक्ति है जिसमें सारे राष्ट्र ने अपनी सार्वभौमिक सत्ता निहित कर दी है, और इस कारण मि. पोकर साहिब का संशोधन जनतंत्र की समस्त व्यवस्था के विपरीत है।

तत्पश्चात् एक और संशोधन भी पेश किया गया है, जिसमें कहा गया है, कि मंत्री तब तक अपने पदों पर रहेंगे जब तक कि वे सभा के विश्वासपात्र रहें। विधान के मसौदे में भी वस्तुस्थिति वही है। मंत्रियों को प्रधान नियुक्त करता है और जब वह जनता का एकमात्र प्रतिनिधि मंत्रियों को नियुक्त करता है, तो परिस्थितियों की मांग होने पर वही उनको पदच्युत करेगा। सभा को विश्वास अथवा अविश्वास का प्रस्ताव पास करने का सदा अधिकार है। सभा द्वारा मंत्रिमंडल में अविश्वास का प्रस्ताव सदा प्रधान को सिफारिश ही होता है कि वह मंत्रिमंडल को हटाने की और उसके स्थान में दूसरा नियुक्त करने की व्यवस्था करे। इस बात का विधान में और भी विवरण दिया गया है। अतः मैं इस संशोधन का भी विरोध करता हूं।

तत्पश्चात्, प्रोफेसर का संशोधन है जिसमें वे कहते हैं कि मंत्रियों को दस वर्ष के लिये अंग्रेजी भाषा जाननी चाहिये और दस वर्ष बाद हिन्दी जाननी चाहिये। जहां तक साक्षरता का प्रश्न है मैं उस विषय में अराजकतावादी हूं। मैं वर्तमान काल की शिक्षा में विश्वास नहीं करता। मैं साक्षरता की विचारधारा के विरुद्ध हूं, यद्यपि उसका भी अपना मूल्य है। यदि मेरे पढ़ने का प्रश्न आज उठता तो पढ़ने-लिखने से इन्कार कर देता। ऐसा ही था, कि मैंने पढ़ने-लिखने से इन्कार कर दिया था और इसी कारण में अध-पढ़ हूं। भारत में बहुसंख्यक जन निरक्षर है। उन्हें देश के शासन में अपने भाग से क्यों वंचित किया जायें? मुझे आश्चर्य है कि साक्षरता को लोगों की सर्वोत्तम सफलता क्यों समझा जाता है। किसी व्यक्ति को देश का शासन संभालने के लिये यही पूर्ण कसौटी क्यों समझी जाये। और कला, उद्योग, कल-विज्ञान, शरीर अथवा सौन्दर्य को अधिक अच्छी कसौटी क्यों न मान लिया जाये। रणजीत सिंह साक्षर नहीं था, शिवाजी साक्षर नहीं था और अकबर भी विशेष साक्षर नहीं था। किन्तु उन सबने अपने राज्यों का शासन बहुत सुचारु रूप से किया। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि हमें साक्षरता को

[श्री महावीर त्यागी]

आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं देना चाहिये। मैं डॉक्टर अम्बेडकर से पूछता हूं कि क्या वे कभी लिखते हैं? कदाचित् उनके पास लिखने के लिये लेखक हैं और पढ़ने के लिये पाठक हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि मंत्रियों को पढ़ने और लिखने की क्या आवश्यकता है। जब उन्हें कुछ लिखने की आवश्यकता हो वे यन्त्र-लेखकों से काम ले सकते हैं। न लिखना ही आवश्यकता है और न पढ़ना ही। आवश्यकता है कार्येच्छा, ईमानदारी, व्यक्तित्व, सच्चाई, बुद्धिमत्ता और खरेपन की। मंत्री बनने के लिये किसी व्यक्ति में ये योग्यतायें होनी चाहियें। साक्षरता का ही महत्त्व नहीं है।

***श्री एच. वी. कामतः** क्या मेरे अदम्य उत्साही मित्र भारत को ऐसा ही निरक्षर रखना चाहते हैं जैसा कि वह आज है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** क्या आपको साक्षरता पर कोई सैद्धान्तिक विरोध है?

***श्री महावीर त्यागीः** जी, नहीं।

***श्री बी.एच. खार्डेकर** (कोल्हापुर): एकाकी और अथक योद्धा प्रोफेसर के.टी. शाह के समर्थन में मैं अपनी छोटी-सी आवाज उठाना चाहता हूं। मैं विशेषतः उनके संशोधन संख्या 1332 का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। जहां तक मंत्रियों का प्रश्न है मैं भ्रष्टाचार की संभावना का पूर्ण निर्मूलन चाहता हूं। प्रधान के विषय में मेरा उनसे मतभेद है। निम्न कारणों से मैं प्रधान और मंत्रियों के बीच बहुत अन्तर करता हूं: प्रधान की कोई कार्यकारिणी सत्ता नहीं होगी। श्रीमान्, प्रधान देश का एक, एक मात्र, सर्वोत्तम और सर्वोच्च नागरिक होगा। वह करोड़ों नेत्रों का आनन्द होगा, लोगों के हृदयों का सुखधाम होगा। लोगों की इस सच्ची प्रतिमा के विषय में कोई संदेह रखना उचित नहीं है। मैं बहमबाजी की बातें नहीं कर रहा हूं। किन्तु मंत्री भिन्न स्तर पर हैं और अत्यन्त भिन्न व्यक्ति हैं। उनके पास कार्यकारिणी शक्ति होती है और अपेक्षाकृत वे बहुत से होते हैं। श्रीमान्, इस देश में, आप जानते हैं कि कुछ लोग बहुत महान् हैं किन्तु वे बहुत थोड़े हैं। मुझे याद है कि परसों मैंने किसी साप्ताहिक में,—मुझे विश्वास है कि शङ्कर के साप्ताहिक में—मैंने एक व्यङ्ग-चित्र देखा था—कि

आजकल दो व्यक्ति सदा समस्त कार्य करते हुए दिखाई देते हैं—वे हैं पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल। एक दो को और समझ लीजिये, किन्तु शेष ऐसे हैं जिन्हें मैं अपेक्षाकृत बहुत साधारण व्यक्ति कह सकता हूं।

अब, मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य अपने कालेज के दिनों की स्मृति जागृत करें और राजनीति-शास्त्र पर एक बहुत महान् पुस्तक—प्लेटो के 'गणराज्य'—के विषय में सोचें। प्लेटो ने हमारे समक्ष आदर्श राज्य का नमूना रखने का प्रयत्न करते हुए शासकों के लिये यह आवश्यक बताया है कि उन्हें किसी सम्पत्ति में तनिक भी वैयक्तिक हित नहीं रखना चाहिये। वह तो आगे चल कर यह भी लिखता है कि शासकों के परिवार भी नहीं होने चाहियें। इस देश में लोग आदर्शवाद की बहुत बातें करते हैं—ऊंचे आदर्शों की—किन्तु जब कार्य रूप में उन्हें परिणत करने का प्रश्न आता है, तो मुझे प्रतीत होता है कि हम बहुत निम्नस्तर पर गिर जाते हैं। यदि प्लेटो के मधुर स्वप्नों को पूरा करना असंभव है तो कम से कम हमें उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये यथासंभव उनके निकट तो पहुंचना ही चाहिये। मैं इतना संदेह भी नहीं करता, किन्तु मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने एक ऐसा उदाहरण देकर बहुत सेवा का कार्य किया है। यह निन्दनीय बात है, इस देश के किसी राज्य की कलंक कहानी की बात है कि वहां एक व्यक्ति जो कि चोर-बाजारी के अपराध पर दंडित था, मंत्री नियुक्त हो गया। यह तो अत्यंत कलंक की बात है। केवल राज्यों में ही नहीं प्रान्तों में भी व्यापक भ्रष्टाचार की कई कथायें सुनाई देती हैं। वे चाहे किवदन्तियां ही हों, किन्तु बिना अग्नि के धुवां नहीं हो सकता, जैसे कि संस्कृत में लोकोक्ति है:—

"यत्र यत्र धूमः
तत्र तत्र वह्निः।"

जब हम गांधी जी की बात करते हैं और प्रत्येक बार उनके नाम को बीच में लाते हैं तो हमें कुछ हद तक उस महान् व्यक्ति के योग्य तो बनना चाहिये, और यदि मैं इस समय भी प्रोफेसर के.टी. शाह के संशोधन में संशोधन रख सकूं तो मैं यहां तक कहूंगा कि मंत्रियों को केवल अपने हितों और अपनी सम्पत्ति की ही घोषणा नहीं कर देनी चाहिये, वरन् उन्हें अपने संबंधियों और मित्रों की घोषणा कर देनी चाहिये। इतना पक्षपात, कुल-पक्षपात और असम-दृष्टि है कि ऐसा प्रतीत होता है कि हम नीचे ही नीचे गिरते जा रहे हैं, यद्यपि हमने बहुत से महान्

[श्री बी.एच. खार्डेकर]

कार्य पूरे कर लिये हैं। प्रोफेसर शाह ने मंत्रियों और उच्चाधिकारियों द्वारा संक्रमण काल में अंग्रेजी जानने के संबंध में जो संशोधन पेश किया है उसका मैं कुछ हद तक समर्थन करना चाहता हूं। श्री महावीर त्यागी के चेतनामय भाषण को सुनने में बहुत आनन्द आया। वे साक्षरता को लगभग समाप्त करने के पक्ष में थे और उन्होंने हमें शिवाजी आदि की याद दिलाई। मैं तो परिषद् को केवल उस व्यंग की याद दिलाना चाहता हूं कि जो फ्रांसिसी राजा ने उस समय किया था जब कि उसने अब्राहम लिंकन की जनतन्त्र की यह परिभाषा सुनी कि "जनता का शासन, जनता द्वारा शासन और जनता के लिये शासन" ही जनतन्त्र है। फ्रांसीसी राजा तत्काल ही बिना सोचे-समझे बोल पड़ा, "पशुओं का शासन, पशुओं द्वारा शासन और पशुओं के लिये शासन, यह जनतन्त्र है"। यदि हम निरक्षर लोगों द्वारा जनतन्त्र चलाना चाहते हैं तो वह ऐसा ही जनतन्त्र होगा जैसा कि फ्रांसीसी राजा ने बताया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उपाध्यक्ष महोदय, जितने संशोधन पेश किये गये हैं उनमें से मैं संशोधन संख्या 1322 को और पंचम सूची के संख्या 71 द्वारा संशोधित संशोधन संख्या 1326 को स्वीकार करने के लिये तैयार हूं। शेष संशोधनों के विषय में मैं एक प्रकार से सरसरी सी टिप्पणी करना चाहता हूं।

इन संशोधनों से तीन बातें पैदा होती हैं। पहली बात मंत्री की पदावधि के विषय में है, दूसरी बात मंत्री की योग्यता के विषय में है और तीसरी बात मंत्रिमंडल की सदस्यता के लिये शर्त के संबंध में है। मैं पहली बात पर अर्थात् मंत्री की पदावधि पर विचार करूंगा। इस विषय में दो संशोधन हैं, एक मि. पोकर का और दूसरा मि. करीमुद्दीन का है। मि. पोकर का संशोधन है कि मंत्री को तब तक अपने पद पर रहना चाहिये, जब तक कि वह सदन का विश्वासपात्र रहे, चाहे और बातें कुछ भी हों। वह भ्रष्टाचारी मंत्री हो, चाहे वह बुरा मंत्री हो, चाहे वह नितांत अक्षम हो, किन्तु यदि उस पर सदन को विश्वास रहे तो किसी को भी उसे पद से हटाने का अधिकार नहीं है। मि. करीमुद्दीन ने जो बात कही है वह, यदि मैं उन्हें ठीक समझा हूं, तो इसके बिल्कुल विपरीत है। उनकी धारणा यह दिखाई देती है कि मंत्री को केवल कुछ निर्धारित अपराधों, जैसे कि घूस,

भ्रष्टाचार, राजद्रोह आदि के महाभियोग द्वारा ही हटाया जायेगा, चाहे वह सदन का विश्वासपात्र हो या न हो। यदि एक मंत्री पर सदन का विश्वास न भी रहे, तो भी जब तक उनके द्वारा निर्धारित कारणों से उस पर महाभियोग न लगाया जाये, तब तक प्रधान मंत्री अथवा प्रधान को उसे हटाने का अधिकार नहीं होगा। यह महती परिषद् देखेगी कि इन दोनों संशोधनों में सामञ्जस्य तो है ही नहीं, भले उनमें ही ये परस्पर विरोधी न हों। मेरा निवेदन है कि अनुच्छेद 62 के उपखण्ड (2) में जो प्रावधान है वह कहीं अच्छा है और उसमें दोनों बातें आ जाती हैं। अनुच्छेद 62 के खंड (2) में कहा गया है कि मंत्रिगण प्रधान के इच्छाकाल तक अपने पद पर आसीन रहेगा। इसका अर्थ यह है कि मंत्री को दो कारणों से पदच्युत किया जा सकता है। एक कारण, जिससे कि वह अनुच्छेद 62 के खंड (2) में कथित प्रावधानों के अन्तर्गत पदच्युत किया जा सकता है, यह है कि वह सदन का विश्वास खो चुका हो, और दूसरा यह कि उसका प्रशासन 'शुद्ध' नहीं है क्योंकि यहां 'इच्छाकाल' शब्द का प्रयोग किया गया है। अनुच्छेद 62 के उस खंड विशेष के अधीन प्रधान को पूरा अधिकार होगा कि किसी मंत्री विशेष को हटाने के लिये इस आधार पर कह सके कि वह भ्रष्टाचार, अथवा घूस अथवा कुशासन का अपराधी है, चाहे वह मंत्री शायद ऐसा व्यक्ति हो जिस पर कि सदन को विश्वास हो। मेरे विचार में माननीय मंत्री यह समझ जायेंगे कि मंत्री की पदावधि के बारे में केवल एक ही नहीं, वरन् दो शर्तें होनी चाहियें, और वे दो शर्तें हैं प्रशासन की शुद्धता और सदन का विश्वास। इस अनुच्छेद में दोनों के लिये बन्धान है, अतः मेरे माननीय मित्र मि. पोकर और मि. करीमुद्दीन द्वारा पेश किये गये संशोधन सर्वथा अनावश्यक हैं।

दूसरी बात, अर्थात् मंत्री की योग्यताओं के विषय में, तीन संशोधन हैं। पहला संशोधन मि. मोहम्मद ताहिर का है। उनका सुझाव है कि किसी व्यक्ति को तब तक मंत्री नियुक्त नहीं करना चाहिये जब तक कि अपनी नियुक्ति के समय वह सदन का निर्वाचित सदस्य न हो। वे परन्तुक में उल्लिखित संभावना को स्वीकार करना नहीं चाहते कि चाहे एक व्यक्ति अपनी नियुक्ति के समय सभा का सदस्य न हो, किन्तु वह मंत्रिमंडल में इस शर्त पर मंत्री नियुक्त किया जा सके, वह छः मास के भीतर ही सभा का सदस्य बन जाये। प्रोफेसर के.टी. शाह ने दूसरी शर्त रखी है। उन्होंने कहा कि मंत्री को बहुसंख्यक दल में से होना चाहिये और वे तीसरी शर्त यह चाहते हैं कि उसकी कुछ विशेष शैक्षणिक स्थिति होनी

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

चाहिये। अब, पहली बात के संबंध में, कि कोई व्यक्ति तब तक मंत्री नियुक्त होने का अधिकारी नहीं होता जब तक कि वह अपनी नियुक्ति के समय सभा का निर्वाचित सदस्य न हो, मेरा ख्याल है कि ऐसा कहते समय कुछ महत्त्वपूर्ण मामलों को ध्यान में नहीं रखा जाता, जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। पहला यह है कि यह कल्पना करना सर्वथा संभव है कि कोई व्यक्ति जो मंत्री के पद पर आसीन होने के सर्वथा योग्य हो, किसी निर्वाचन-क्षेत्र में किसी कारण से पराजित हो जाये। संभव है निर्वाचन-क्षेत्र वाले चिढ़ गये हों और उसने उस निर्वाचन-क्षेत्र विशेष को नाराज कर दिया हो। कोई कारण नहीं है कि ऐसे योग्य व्यक्ति को इस धारणा के आधार पर मंत्रिमंडल का सदस्य नियुक्त न किया जाये कि वह उसी निर्वाचन क्षेत्र से अथवा किसी अन्य निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित हो जायेगा। आखिर केवल उतना ही विशेषाधिकार तो उसे दिया गया है कि वह छः मास ही तक रहेगा? इससे उस व्यक्ति को यह अधिकार नहीं मिल जाता कि वह सर्वथा बिना निर्वाचित हुए ही सभा में बना रहेगा। मेरा दूसरा निवेदन यह है कि किसी मनोनीत व्यक्ति के मंत्रिमंडल का सदस्य होने से न तो संयुक्त उत्तरदायित्व के ही सिद्धान्त का उल्लंघन होता है और न इससे विश्वास के सिद्धान्त का उल्लंघन होता है, क्योंकि यदि वह मंत्रिमंडल का सदस्य होता है, यदि वह मंत्रिमंडल की नीति को स्वीकार करने के लिये उद्यत है तो वह मंत्रिमंडल का अंग होता है और यदि वह सदन का विश्वासपात्र नहीं रहता तो वह मंत्रिमंडल के साथ ही त्यागपत्र देता है। उसके मंत्रिमंडल का सदस्य होने से किसी प्रकार कोई असुविधा अथवा उन मूलभूत सिद्धान्तों का हनन नहीं होता जिन पर संसदात्मक सरकार आधारित होती है। अतः मेरे विवेकानुसार यह योग्यता सर्वथा अनावश्यक है।

दूसरी शर्त अर्थात् सदस्य के बहुसंख्यक दल का सदस्य होने के संबंध में मेरा ख्याल है कि प्रोफेसर के.टी. शाह की ऐसी कल्पना है या उन्हें ऐसा विश्वास और आशा है कि निर्वाचक निर्वाचन में सदा एक ऐसे दल को चुनेंगे जो कि बहुमत में होगा और एक अन्य दल को चुनेंगे जो कि अल्पमत में होगा किन्तु विरोध में होगा। अब, ऐसी धारणा बनाना ठीक नहीं होगा। यह सर्वथा संभव और स्वाभाविक होगा, कि किसी निर्वाचन के बाद संसद् में कई दल हों, जिनमें से कोई बहुमत में न हो। यह सिद्धान्त उस प्रकार की स्थिति में कैसे लागू हो सकता है अथवा काम में लिया जा सकता है, जब कि तीन दल हों, जिनमें से एक का भी बहुमत न हो? अतः उस प्रकार की स्थिति में प्रोफेसर के.टी. शाह

द्वारा रखी गई शर्त के कारण तो शासन सर्वथा असंभव हो जायेगा।

दूसरी बात, यह मानते हुए भी कि सदन में बहुमत दल है, किन्तु कोई अत्यधिक स्थिति है और बहुमत दल तथा अल्पमत दल दोनों की ओर से यह इच्छा प्रकट की जाती है कि संकटकाल की अवधि में दलीय संघर्षों को बंद कर देना चाहिये तथा कोई दलीय सरकार नहीं बननी चाहिये, जिससे कि सरकार संकटकाल का सामना कर सके—उस अवस्था में भी ऐसी स्थिति का सामना केवल मिश्रित सरकार बना कर ही किया जा सकता है, और यदि एक मिश्रित सरकार बनती है तो यह स्पष्ट है कि अल्पमत दल के सदस्यों को मंत्रिमंडल के सदस्य बनने का अधिकार होगा। अतः मेरा निवेदन है कि इन दोनों कारणों से यह संशोधन व्यावहारिक नहीं है।

शिक्षा-संबंधी योग्यता के विषय में, चाहे मेरे मित्र श्री महावीर त्यागी ने साक्षरता विषयक योग्यता के विषय में कुछ भी कहा हो, किन्तु जब मैंने उनसे पूछा कि साक्षरता की योग्यता के विषय में उन्होंने इतने बलपूर्वक अपने विचारों को प्रगट किया है, इस बात को ध्यान में रखते हुए क्या उन्हें साक्षरता संबंधी योग्यता पर कोई सैद्धान्तिक आपत्ति है, तो उन्होंने मुझे प्रसन्नतापूर्वक यह आश्वासन दिया था कि कोई नहीं है। साथ ही, मुझे आश्चर्य है कि ऐसा कोई प्रधानमंत्री अथवा प्रधान होगा जो अंग्रेजी न जानने वाले व्यक्ति को नियुक्त करेगा, यह मानते हुए कि अंग्रेजी कार्यकारिणी अथवा संसद् के कार्य के हेतु सरकारी भाषा रहती है। मैं ऐसी बात की कल्पना नहीं कर सकता। फर्ज़ किया सरकारी भाषा हिन्दी, हिन्दुस्तानी अथवा उर्दू, चाहे कुछ भी हो—उस अवस्था में, मैं यह सोचना भी असंभव समझता हूं कि कोई प्रधान-मंत्री इतना मूर्ख होगा कि वह ऐसे मंत्री को नियुक्त करे जो कि देश की अथवा शासन की सरकारी भाषा को न समझे, और यद्यपि यह बात ध्यान में रखना निस्संदेह वांछनीय है कि जो व्यक्ति शासन के किसी विभाग का स्वामी होगा, उसकी शैक्षणिक योग्यता उपयुक्त होनी चाहिये, किन्तु मेरे विचार में इस सिद्धान्त को विधान में रखना अनावश्यक सा है।

अब मैं तीसरी शर्त को लेता हूं जो यह है कि मंत्रिमंडल का जो सदस्य बने उसे वास्तव में पद ग्रहण करने से पहले अपने हितों, अधिकारों और संपत्तियों की

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

घोषणा कर देनी चाहिये। प्रोफेसर के.टी. शाह के इस संशोधन को कुछ हद तक श्री कामत ने संशोधित किया है। इस विषय पर परिषद् में वाद-विवाद पहली बार नहीं किया जा रहा है। इस प्रश्न पर उस समय भी बहस हुई थी जब कि प्रधान की नियुक्ति और शपथ संबंधी अनुच्छेद के विषय में भी ऐसे ही संशोधन पेश किये गये थे, और उस समय मैंने इस पर बहुत कुछ कहा था, और उस अवसर पर मैंने जो कुछ कहा था, मैं उसे यहां दोहराना नहीं चाहता। मेरे मित्र श्री कामत ने मुझे स्मरण कराया है कि परिषद् में प्रधान संबंधी अनुच्छेद पर बहस हुई थी तब मैंने क्या कहा था, और मुझे याद है कि मैंने यह अवश्य कहा था कि ऐसा प्रावधान आवश्यक हो सकता है.....

***श्री एच.वी. कामतः** क्या मैं डाक्टर अम्बेडकर को स्मरण करा सकता हूं कि उन्होंने शब्दशः क्या कहा था? मैं परिषद् के सचिवालय की सरकारी टाइप-लिपि में पढ़ता हूं। उनके यही शब्द हैं:

> "यदि भारत सरकार में किसी व्यक्ति को अपने परिपोषण करने का कोई अवसर है, तो प्रधान मंत्री को है अथवा राज्य के मंत्रियों को है, और ऐसा बन्धान उनकी पदावधि के लिये उन पर लगाया जाना चाहिये किन्तु प्रधान पर नहीं।"

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं भी यही कह रहा था। मैंने तो यह कहा था कि मंत्रियों के विषय में ऐसा बन्धान अपेक्षित हो सकता है, और मेरे मित्र श्री कामत ने फैक्टरी कानून में से कोई धारा पढ़कर भी सुनाई थी जिसमें फैक्टरी दरोगा के लिए ऐसी योग्यताएं अपेक्षित थीं। अब, श्रीमान्, हमें जिस स्थिति पर विचार करना है वह यह है: निस्संदेह, यह अत्यन्त प्रशंसनीय उद्देश्य है कि विभागाधिकारी मंत्रियों को प्रशासन की शुद्धता स्थिर रखनी चाहिये। मैं नहीं समझता कि इस परिषद् में किसी को भी इस पर आपत्ति हो सकती है। हम सबको इस बात में रुचि है कि प्रशासन उच्च स्तर पर रहे, केवल कुशलता में ही नहीं शुद्धता की दृष्टि से भी। वास्तव में प्रश्न यह है: इस शुद्धता को स्थिर रखने के लिये क्या वैधानिक शक्ति हो? मुझे तो दिखता है कि दो बन्धान हो सकते हैं। एक तो यह कि हमें कानून अथवा संविधान द्वारा केवल यही बात निश्चित नहीं कर देनी चाहिये कि मंत्रियों को पद ग्रहण करने के समय अपनी

संपत्ति और दायित्वों की घोषणा करनी चाहिये, किन्तु हमें दो अन्य प्रावधान भी रखने चाहियें। एक यह है कि प्रत्येक मंत्री अपना पद छोड़ते समय पदत्याग के दिन अपनी संपत्ति की घोषणा करेगा, जिससे कि प्रत्येक व्यक्ति, जो कि यह हिसाब लगाना चाहे कि उसकी पदावधि में प्रशासन भ्रष्टाचार युक्त था या नहीं, वह यह देख सकता है कि मंत्री की संपत्ति में कितनी वृद्धि हुई और क्या उस वृद्धि का हिसाब उस बचत में से पूरा किया जा सकता है जो वह अपने वेतन में कर सकता हो। दूसरा बन्धान यह होगा कि यदि हमें पता लगे कि त्यागपत्र देने के दिन तक मंत्री की सम्पत्ति में जो वृद्धि हुई उसका हिसाब उसकी बचत में से पूरा नहीं बैठ सकता, तो उस मंत्री पर अभियोग लगाने के लिये तीसरा बन्धान होना चाहिये कि वह इस बात की सफाई पेश करे कि उसने उस अवधि में अपनी संपत्ति में असाधारण वृद्धि कैसे कर ली। मेरे विचार में, यदि आप इस खंड को प्रभावी बनाना चाहते हैं तो मेरे बताये हुए तीन प्रावधान होने चाहियें। एक तो आरंभ में घोषणा करने का, दूसरा पद छोड़ते समय घोषणा करने का, तीसरा यह बताने के उत्तरदायित्व के विषय में कि वह संपत्ति इतनी असाधारण रूप से कैसे बढ़ी है, और चौथा बन्धान इसे अपराध घोषित करने का हो जिसमें दण्ड अथवा जुर्माने की व्यवस्था हो। आरंभ में केवल इतना ही घोषित करना·····।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** आप अदृश्य पूंजी का अथवा गुप्त पूंजी का कैसे पता लगा सकते हैं या उसे कैसे रोक सकते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** सारी बात ही व्यर्थ है, यह कहना चाहिये। इस संशोधन के बावजूद भी यह किसी मंत्री के लिये संभव हो सकता है कि वह उस अवधि में अपनी पूंजी को इस प्रकार से हस्तांतरित कर दे कि किसी को यह पता न लग सके कि उसने क्या किया है, और इस कारण, यद्यपि उद्देश्य प्रशंसनीय है, किन्तु इसके लिये व्यवस्था बहुत अपूर्ण रखी गई है और मैं कहता हूं कि उपचार कदाचित् रोग से भी अधिक भयानक हो।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या, श्रीमान्, मैं यह समझ लूं कि डॉक्टर अम्बेडकर कम से कम सिद्धान्त में तो इस संशोधन को स्वीकार करते हैं और कि वे अपनी

[श्री एच.वी. कामत]

बात से पीछे नहीं हटे हैं जो उन्होंने परसों कही थी, कि वे वापस नहीं लौटे हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं अपनी बात से बिल्कुल पीछे नहीं हटता। मैं तो बस यही कह रहा हूं कि जिस उपचार का प्रावधान किया गया है वह अत्यन्त अपूर्ण है और प्रभावी नहीं है, और इसलिये, मैं इसे स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हूं।

***प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना:** इसे अधिक व्यापक बना दीजिये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं अब ऐसा नहीं कर सकता। जिन्होंने यह संशोधन पेश किया है उनका यह काम था कि इसे ऐसा बनाते कि कोई मूर्ख न बना सके और धोखा न दे सके, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया।

अब, श्रीमान्, मैं कह रहा था कि किसी को भी इस संशोधन के उद्देश्य पर कोई आपत्ति नहीं है; किसी को इससे कोई झगड़ा नहीं है। प्रश्न यह है, हम किस प्रकार इस पर रोक लगावें। जैसे कि मैं कह चुका हूं, कानूनी शक्ति अपर्याप्त है। क्या हमारे पास और कोई शक्ति है ही नहीं? मेरे विवेकानुसार, प्रशासन की शुद्धता को स्थिर रखने के लिये हमारे पास एक अधिक अच्छी शक्ति है, और वह है व्यवस्थापिका सभा में एकत्रित और केन्द्रित जनमत की शक्ति। मेरे माननीय मित्र श्री एच.वी. कामत ने फैक्टरी कानून का उदाहरण दिया है। फैक्टरी दरोगा के लिये ऐसी निर्योग्यताएं रखने का कारण यह है कि जनमत का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता, किन्तु मंत्रिमंडल के विरुद्ध तो जनमत का प्रचण्ड दण्ड सदा सामने रहता है, और यदि सभा चाहे तो किसी समय वह किसी कुशासन पर अपनी सत्ता का प्रयोग करके मंत्रिमंडल को हटा सकता है; और इसलिये मेरा निवेदन यह है कि सभा के मत और प्राधिकार में प्रशासन की शुद्धता को स्थिर रखने की अधिक शक्ति है जिससे कि कोई बाह्य शक्ति की आवश्यकता नहीं रहती।

***श्री लोकनाथ मिश्र** (उड़ीसा : जनरल): क्या वह अधिक असंभव कार्य नहीं है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जनतंत्र को इससे भी अधिक असंभव कई कार्य करने होते हैं। यदि आप जनतंत्र चाहते हैं तो आपको उनका सामना करना होगा।

अब, श्रीमान्, मैं अपने माननीय मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन पर आता हूं। वे मेरे पेश किये हुए संशोधन के उत्तर भाग को हटाना चाहते हैं। उनकी आपत्ति यह है कि यदि मेरे संशोधन का उत्तर भाग रहा तो वह मेरे संशोधन के पूर्वभाग को बेकार कर देगा, जिसमें निदेशपत्र में दिये गये निदेशों पर चलने के मंत्री के कर्त्तव्य की चर्चा है। हां, सैद्धान्तिक रूप में तो ऐसा है। वहां भी यही प्रश्न उठता है। हम निदेशपत्र में उल्लिखित आज्ञाओं को कैसे कार्यान्वित करेंगे? इसके दो तरीके हैं। एक तरीका तो यह है कि न्यायालय को इस मामले की जांच करने और इसकी वैधता पर निर्णय देने की अनुमति दी जाये। दूसरा तरीका यह है कि इस मामले को विधान-मंडल पर छोड़ दिया जाये और यह देखा जाये कि वह निन्दा प्रस्ताव द्वारा या अविश्वास प्रस्ताव द्वारा मंत्रिमंडल को बाध्य कर सकता है या नहीं कि मंत्रिमंडल प्रधान को उचित परामर्श दे और वह प्राभियोग द्वारा प्रधान को बाध्य कर सकता है या नहीं कि प्रधान मंत्रिमंडल के उस परामर्श पर चले। मेरे विवेकानुसार, बाद वाला तरीका हमारे प्रयोजन को सिद्ध करने का अधिक अच्छा तरीका है और यह अनुचित तथा असुविधाजनक होगा यदि सभा की किसी कार्यवाही को न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत कर दिया जाये, जिससे कि कोई भी अड़ियल सदस्य सर्वोच्च न्यायालय में जाकर निषेधाज्ञा द्वारा सभापति को सभा का कार्य चलाने से वर्जित करा सके, जब तक कि वह विशेष मामला सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा, जैसी भी स्थिति हो, निश्चित न हो जाये। मुझे दिखाई देता है कि वह तो सभा के कार्य में असह्य बाधास्वरूप हो जायेगा। इंगलिस्तान में भी संसद् अपनी कार्यप्रणाली और कार्य वाहन के विषय में न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत नहीं होती, और मेरे विचार में यह बहुत सुचारु नियम है, जिसका हमें अनुसरण करना चाहिये, विशेषत: जब कि सभा के लिये यह देखना सर्वथा संभव है कि निदेश-पत्र का उसी भावना से पालन किया जाये जैसे कि प्रधान और मंत्रिमंडल की इच्छा हो। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** मंत्रिमंडल में मनोनीत सदस्य रखने के विषय में क्या बात है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उस पर बोल चुका हूं।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिये जायें:

'(3) A member of the Cabinet shall not be liable to be removed except on impeachment by the House on the ground of corruption or treason or contravention of laws of the country or deliberate adoption of policy detrimental to the interests of the State.

(3A) The procedure for such impeachment will be the same as provided in article 50.' "

(3) भ्रष्टाचार अथवा राजद्रोह अथवा देश के कानून का विरोध करने अथवा राज्य हित के लिये घातक नीति को जानबूझ कर ग्रहण करने के आधार पर आगार द्वारा प्राभियोग लगाने के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से मंत्रिमंडल का सदस्य हटाया नहीं जा सकेगा।

(3क) ऐसे प्राभियोग के लिये वही विधि होगी जो अनुच्छेद 50 में प्रावहित है।]

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (1) में 'and the other Ministers' शब्दों के पूर्व 'from the members of the party commanding a majority of votes in the People's House of Parliament' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (5) के पश्चात् निम्न नया खण्ड रख दिया जाये:

'5(a) In the choice of his Ministers and the exercise of his other functions under this Constitution, the

President shall be generally guided by the instructions set out in Schedule III-A, but the validity of anything done by the President shall not be called in question on the ground that it was done otherwise than in accordance with such instructions.' "

[5(क) अपने मंत्रियों को चुनने में तथा इस संविधान के अंतर्गत अन्य प्रकार्यों की पूर्ति में, प्रधान साधारणत: अनुसूची 3-क में दी हुई हिदायतों के अनुसार चलेगा, किन्तु प्रधान द्वारा की हुई किसी बात की मान्यता पर इसीलिये आपत्ति नहीं की जायेगी कि वह बात इन हिदायतों से अन्यथा की गई है।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इस संशोधन पर एक संशोधन है, जिस पर पहले मत लेने चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन 1329 में, प्रस्तावित नये खण्ड (5क) में 'किन्तु प्रधान द्वारा' इससे आरम्भ होने वाले अंत तक समस्त शब्द हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

उपाध्यक्ष: प्रश्न यह है:

"कि खंड (1) के पश्चात् निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये जो खंड (2) हो, और वर्तमान खंडों की संख्याओं में परिवर्तन कर दिया जाये:

'(2) अपने मंत्रियों को चुनने में प्रधान साधारणत: उन हिदायतों के अनुसार चलेगा जो कि अनुसूची 4 (क) में दी गई हैं।'"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्न शब्द रख दिये जायें:

'(2) मंत्रिगण तभी तक पदासीन रहेंगे जब तक कि वे लोक-सभा के विश्वास के पात्र रहें।'"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1319 में अंग्रेजी के इन शब्दों 'People's House of Parliament' (जिन शब्दों को रखने का सुझाव है उन में) के स्थान पर 'House of the People's ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1319 जो प्रोफेसर के. टी. शाह के नाम से है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (2) में 'during the pleasure of the President' इन शब्दों के स्थान पर 'such time as they possess the confidence of a majority in the People's House of Parliament' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** सूची 4 का संशोधन संख्या 49 जो मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के नाम से है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सूची के संशोधन संख्या 1320 में, 'maintains' शब्द के स्थान पर 'enjoys' शब्द रख दिया जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1320 जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम में है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (2) के अंत में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'and till such time as the Council of Ministers maintains the confidence of the Parliament.' "

(और उस समय तक जब तक कि मंत्रिपरिषद् संसद् की विश्वासपात्र रहे।)

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1322 जो कि श्री मिहिरलाल चट्टोपाध्याय के नाम पर है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (3) में 'Council' शब्द के पश्चात् 'of ministers' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1325 जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम पर है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (5) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:

'(5) A minister shall at the time of his appointment as such, be a member of the Parliament.' "

[(5) कोई मंत्री अपने पद पर नियुक्त होने के समय संसद् का सदस्य होगा।]"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1326 जिस रूप में कि वह सूची 5 के संशोधन संख्या 71 द्वारा संशोधित हुआ और तत्पश्चात् श्री कृष्णमाचारी और श्री कामत द्वारा संशोधित हुआ।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खण्ड (5) में 'छः निरन्तर मासों की किसी अवधि तक' इन शब्दों के स्थान पर 'अपनी नियुक्त की तारीख से, छः निरन्तर मासों की अवधि तक' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1328, जिस रूप में कि वह सूची 5 के संशोधन संख्या 72 द्वारा संशोधित हुआ है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (5) में, 'सदस्य न रहे' इन शब्दों के स्थान पर 'निर्वाचित सदस्य न रहे' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1332 जो प्रोफेसर के.टी. शाह के नाम से है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (6) के पश्चात् निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:

'(7) Every Minister shall, before he enters upon the functions and responsibilities of his office, make a declaration and take steps in regard to any right, title, corresponding to those provided in this Constitution for the President and Vice-President, and shall take an oath—or make a solemn declaration—in the presence of the President and of his colleagues in the following form.' "

[(7) प्रत्येक मंत्री, अपने पद के प्रकार्यों तथा उत्तरदायित्वों को ग्रहण करने से पूर्व, किसी अधिकार, स्वत्व के विषय में ऐसी घोषणा करेगा तथा ऐसे कार्य करेगा, जैसे कि इस विधान में प्रधान तथा उपप्रधान के लिये प्रावहित हैं, और निम्नलिखित प्रपत्र के अनुसार प्रधान तथा अपने साथियों की उपस्थिति में शपथ लेगा अथवा गंभीर निश्चयोक्ति करेगा।]

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** सूची 4 का संशोधन संख्या 51 जो श्री कामत के नाम में है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1332 के स्थान पर, निम्न संशोधन रख दिया जाये:

"कि अनुच्छेद 62 के खंड (6) के पश्चात् निम्न नया खंड रख दिया जाये:

'(7) Every minister including the Prime Minister shall, before he enters upon his office, make a full disclosure to Parliament of any interest, right, share, property or title he may have in any enterprise, business or trade, directly owned or controlled by the State, or which is in any way aided, protected or subsidised by the State; and Parliament may deal with the

matter in such manner as it may, in the circumstances, deem necessary or appropriate.' "

[(7) प्रत्येक मंत्री, जिसमें प्रधान मंत्री भी शामिल है अपना पद ग्रहण करने से पूर्व, संसद् को अपने किसी हित, स्वत्व, अंश, सम्पत्ति अथवा अधिकार का ब्यौरा दे देगा, जो कि उसे किसी ऐसे कार्य, व्यापार या वाणिज्य, में हो, जिस पर राज्य का नियन्त्रण हो या जिसे किसी प्रकार राज्य से सहायता, रक्षण अथवा आर्थिक मदद मिलती हो, और संसद् उस विषय पर ऐसे तरीके से निर्णय करेगी जो कि वह, उन परिस्थितियों में आवश्यक अथवा उपयुक्त समझे।] "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** सूची 4 का संशोधन संख्या 52, जो कि मि. नज़ीरुद्दीन के नाम पर है।

"कि संशोधन-सूची के संशोधन संख्या 1336 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 62-ए में 'सर्वोच्च न्यायालय के अथवा संघ के किसी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्ष' ये शब्द हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1336 जो प्रोफेसर के. टी. शाह के नाम पर है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 62 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:

'62-A. No one shall be elected or appointed to any public office including that of the President, Governor, Minister of the Union or of any State of the Union, Judge of the Supreme Court or of any High Court in any State in the Union, who—

(a) is not able to read or write and express in the English language ; or

(b) within ten years from the day when this Constitution comes into operation, is not able to read or write or express himself in the National language; or

[उपाध्यक्ष]

(c) or who has been found guilty at any time before such election or appointment of any offence against the safety, security or integrity of the Union; or

(d) of any offence involving moral turpitude and making him liable on conviction to a maximum punishment of two years' imprisonment; or

(e) or who has not prior to such election or appointment served in some public body, or done some form of social work, or otherwise proved his fitness, capacity and suitability for such election or appointment as may be laid down by Parliament by law in that behalf.' "

[(62-ए) ऐसा कोई व्यक्ति किसी सरकारी पद के लिये, जिनमें प्रधान, गवर्नर, संघीय मंत्री अथवा संघ के किसी राज्य के मंत्री, सर्वोच्च न्यायालय के अथवा संघ के किसी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाध्यक्ष के पद भी सम्मिलित हैं, नियुक्त अथवा निर्वाचित नहीं किया जायेगा, जो–

(क) अंग्रेजी भाषा में लिखने, पढ़ने अथवा अपने विचार व्यक्त करने के योग्य न हो; अथवा

(ख) इस संविधान के प्रवर्त्तन में आने के दस वर्ष के भीतर ही, राष्ट्रभाषा में पढ़ने, लिखने अथवा अपने विचार व्यक्त करने के योग्य न हो; अथवा

(ग) किसी समय ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति से पूर्व संघ की सुरक्षा, संरक्षा अथवा अखंडता के विरुद्ध किसी अपराध के लिये दोषी सिद्ध हुआ हो; अथवा

(घ) ऐसे नैतिकपतन संबंधी अपराध का दोषी सिद्ध हुआ हो जिस पर उसे दो वर्षों से अधिक कारावास का दंड दिया जा सकता हो; अथवा

(ङ) ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति के पूर्व किसी सार्वजनिक संस्था में सेवाकार्य न कर चुका हो, अथवा किसी प्रकार का सामाजिक कार्य

न कर चुका हो, अथवा ऐसे निर्वाचन अथवा नियुक्ति के लिये अन्यथा अपनी योग्यता, क्षमता और उपयुक्तता सिद्ध न कर चुका हो, जैसे कि इस विषय में संसद् कानून द्वारा व्यवस्था करे।]"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** इस संशोधन पर एक संशोधन है। उस पर पहले मत लिये जाने चाहियें।

***उपाध्यक्षः** उस पर पहले लिये गये। शायद माननीय सदस्य कार्यवाही को ध्यान से नहीं समझ रहे हैं।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 62 विधान का भाग हो।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 62 विधान में जोड़ दिया गया।

***उपाध्यक्षः** अब हम अगले.....।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** उपाध्यक्ष महोदय, क्या मैं यह सुझाव दे सकता हूं कि परिषद् अनुच्छेद 67 को ले ले, क्योंकि परिषद् के बहुत से सदस्यों की यह इच्छा है कि निर्वाचन संबंधी अनुच्छेदों को पहले पारित कर दिया जाये जिससे कि निर्वाचन-व्यवस्था को स्थापित किया जा सके?

***बी. पोकर साहिब बहादुरः** उपाध्यक्ष महोदय, मुझे इस प्रस्तावित कार्यप्रणाली पर तीव्र आपत्ति है। वास्तव में सदस्यों को यह जानने का अधिकार है कि परिषद् का कार्य किस क्रमानुसार होगा। यदि अकस्मात्, किसी सदस्य विशेष के बहम के अनुसार, कोई अनुच्छेद विशेष अचानक ले लिया जाये, तो मेरा निवेदन है कि इससे इस परिषद् के माननीय सदस्यों को बहुत असुविधा हो जायेगी और उनके लिये काम करना असंभव हो जायेगा। अनुच्छेद 67 अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है और यदि उस पर पहले विचार किया जाना है तो आप द्वारा इसकी घोषणा की जानी चाहिये और माननीय सदस्यों को इसकी पर्याप्त सूचना मिलनी चाहिये और इसलिये, मुझे अपने माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के सुझाव पर प्रबल आपत्ति है।

***उपाध्यक्ष:** मैं माननीय सदस्य को स्मरण कराना चाहता हूं कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के सुझाव को परिषद् की अनुमति लिये बिना कार्यान्वित नहीं किया जा सकता, और मैं यथासमय ऐसी अनुमति प्राप्त करूंगा।

दूसरी बात, जहां तक वैधानिक आपत्ति का प्रश्न है, मैं माननीय सदस्य को स्मरण कराना चाहता हूं कि जो कार्यवली भेजी गई है उसमें हमने स्पष्टत: कह दिया है कि अमुक भाग लिया जायेगा। ऐसा विशेष संकेत नहीं है। अन्तत:, मैं उन्हें याद दिलाना चाहता हूं कि विचाराधीन संशोधनों का वर्गीकरण माननीय सदस्यों के पास भेज दिया गया है। उस आपत्ति को मैं नहीं मानता।

वास्तविक आपत्ति यह है कि आया परिषद् सामूहिक रूप से अनुच्छेद 47 को लेना चाहती है। मैं परिषद् को सूचना देना चाहता हूं कि मुझे बताया गया है कि कई प्रान्तों में निर्वाचन सूचियां लगभग पूर्ण हैं और कुछ प्रांतों में सूचियां तैयार की जा चुकी हैं। अब यह हम पर है कि अनुच्छेदों के पास करने में शीघ्रता करें क्योंकि यदि कोई बड़ा परिवर्तन कर दिया गया, तो प्रांतीय सरकारों के कार्य में बड़ा खलल पड़ जायेगा। हमें इस बात को ध्यान में रखना है। किन्तु यह परिषद् को निर्णय करना है कि आया वह अपनी प्रतिष्ठा पर अड़ी रहेगी और प्रांतीय सरकार की कठिनाइयों को बढ़ाती जायेगी।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, क्या मैं इस संबंध में आपके समक्ष एक विचार उपस्थित कर सकता हूं? जहां तक मुझे स्मरण है, मसौदा-समिति ने इस खंड पर एक संशोधन का सुझाव दिया है। इस संशोधन में कहा गया है कि इस अनुच्छेद में, राज्यों के लिये निश्चित निर्वाचित स्थानों के अनुपात की जगह प्रत्येक राज्य के लिये निश्चित संख्या रख दी गई। अत: मेरे विचार में इस अनुच्छेद पर अब विचार नहीं होना चाहिये, अपितु आगामी सोमवार को होना चाहिये। इससे व्यवहार रूप में कोई विलम्ब नहीं होगा। लगभग एक बजने ही वाला है और क्योंकि आज शुक्रवार है अत: मेरा ख्याल है कि अपनी साधारण परम्परानुसार आज परिषद् एक बजे उठ जायेगी।

***उपाध्यक्ष:** हां।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** यदि हम इस खंड को सोमवार को लें तो हमें इस विषय पर और पूरी तरह विचार करने का समय मिल जायेगा और हम यह भी पता कर सकेंगे कि यहां राज्यों के प्रतिनिधित्व के विषय में पिछली बार क्या किया गया था। इस विषय पर स्वयं डॉक्टर अम्बेडकर से परामर्श करने का भी समय हमें मिल जायेगा।

***उपाध्यक्ष:** यह अधिक उचित आपत्ति दिखाई देती है। मैं सर्वथा तैयार हूं.....।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मुझे एक और भी अधिक महत्त्वपूर्ण विचार पेश करना है।

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 62-ए को लेंगे। हम अनुच्छेद 67 सोमवार को लेंगे। उस संबंध में मैं परिषद् को स्मरण कराना चाहता हूं कि निर्वाचन प्रावधानों से संबंधित अन्य अनुच्छेद भी हैं। वे हैं अनुच्छेद 149, 150, 289, 290 और 291 । मैं विभिन्न अनुच्छेदों का वर्गीकरण किस प्रकार करना चाहता हूं इस विषय में माननीय सदस्यों को यथासमय सूचना दे दी जायेगी, जिससे कि ज्यों ही अनुच्छेद 67 समाप्त हो त्यों ही हम अनुच्छेद 149 को ले सकें और तत्पश्चात् 150 को, और इसी प्रकार क्रमश: चल सकें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** क्या उससे कार्य में कुछ भी प्रगति होगी? यदि अनुच्छेद 67 पारित भी हो जाये तो वह प्रवर्तन में तो नहीं आयेगा, क्योंकि जब तक हम समस्त विधान को तृतीय वाचन के पश्चात् पारित न कर दें और उस पर प्रधान हस्ताक्षर न कर दे.....।

***उपाध्यक्ष:** हम जब अनुच्छेद 67 को पारित करेंगे तब इस पर विचार करेंगे। कदाचित् कुछ वकीलों की बुद्धि से कोई ऐसा उपाय निकल जायेगा, जिससे कि हम इस कठिनाई को दूर कर सकें।

अनुच्छेद 62-ए

***उपाध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 62-ए और 62-बी पर आते हैं। संशोधन संख्या 1338 ।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 62 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद 62-ए रख दिया जाये:

[प्रो. के.टी. शाह]

'62-A. No one selected to be a Minister shall be a member of Parliament in either House; and if already a member of either House, he shall, before accepting the office of a Minister, resign his seat in the Legislature. The provisions of article 48-A shall apply to every Minister *mutatis mutandis*.

62-B. A Minister shall have the right to sit in either House of Parliament and to address the House or any of its committees, at any time he deems necessary but not vote on any, issue coming before any such body.' "

[62-ए कोई भी व्यक्ति जो मंत्री चुना जाये संसद् के किसी आगार का सदस्य न होगा; और यदि वह पहले ही किसी आगार का सदस्य हो तो, वह, मंत्रिपद स्वीकार करने से पहले विधान-मंडल में अपने पद से त्याग-पत्र दे देगा। अनुच्छेद 48-ए के प्रावधान प्रत्येक मंत्री पर यथायोग्य लागू होंगे।

62-बी मंत्री को संसद् के किसी आगार में बैठने का, और आगार में अथवा उसकी किसी समिति में, जब भी वह आवश्यक समझे तभी, भाषण देने का अधिकार होगा, किन्तु ऐसे किसी निकाय के समक्ष पेश होने वाले किसी प्रश्न पर मत देने का अधिकार न होगा।]

श्रीमान्, इस प्रस्ताव को परिषद् में पेश करने के पहले क्यों मैं यह कह सकता हूं कि यह संशोधन मेरी संशोधनों की योजना का फल है जो कि उस समय मेरे दिमाग में थी जब कि मैं यह सुझाव दे रहा था कि कार्यकारिणी अथवा मंत्रिमंडल को विधायिका से पृथक् कर देना चाहिये और राज्य के सब अंगों को एक-दूसरे से पृथक् कर देना चाहिये। क्योंकि परिषद् ने उसे अस्वीकार कर दिया है अतः मुझे आश्चर्य है कि इस प्रस्ताव के प्रथम भाग को प्रस्तावित करना नियमानुकूल होगा या नहीं।

***उपाध्यक्षः** दूसरा भाग ले लीजिये।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** उस अवस्था में मैं दूसरे भाग को पेश कर रहा हूं जिसमें कहा गया है कि मंत्रियों को किसी भी आगार में बैठने का

अधिकार होना चाहिये चाहे वे मूलत: किसी आगार के हों अथवा उसमें चुने गये हों।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** क्या मैं बता सकता हूं कि यह अनुच्छेद 72 का विषय है?

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** तो मैं इसे उस समय ही पेश करूंगा।

***उपाध्यक्ष:** अब हम नया अनुच्छेद लें या अब उठ जायें। अनुच्छेद 63 शायद आज समाप्त नहीं होगा। समस्त सोमवार को तो मैं अनुच्छेद 67 के लिये रखना चाहता हूं।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** हम अनुच्छेद 66 को समाप्त कर सकते हैं। वह छोटा-सा है।

***उपाध्यक्ष:** मैं नये अनुच्छेद को आरंभ नहीं करना चाहता क्योंकि उससे हमारे कार्य में सोमवार को बाधा पड़ेगी, और मेरा अनुमान है कि मंगलवार से अपना ध्यान लगाने के लिये हमारे पास और दूसरा काम है। मुझे परिषद् को सूचना देनी है कि यह अत्यन्त संभव है कि हम अपना कार्य 8 जनवरी को समाप्त कर लेंगे; किन्तु 8 जनवरी अर्थात् शनिवार को बैठक होगी। औपचारिक घोषणा बाद में की जायेगी, किन्तु मैं अग्रिम सूचना दे रहा हूं ताकि माननीय सदस्यों को अपनी यात्रा के लिये स्थान निश्चित करने में कोई कठिनाई न पड़े।

परिषद् आगामी सोमवार को प्रात: के दस बजे तक के लिये स्थगित होती है।

तत्पश्चात् परिषद् सोमवार दिनांक 3 जनवरी, 1949 को प्रात: दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।